नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक

बिगुल

मासिक समाचारपत्र • वर्ष 5 अंक 11
दिसम्बर 2003 • तीन रुपये • बारह पृष्ठ

तहलका काण्ड के नये-नये एपिसोड

पूंजीवाद से सदाचार की कैसी उम्मीद!

पूंजीवादी राजनीति के बाजार में नंगों का मेला
कानूनी लूट की कोख से ही पैदा होती है गैरकानूनी लूट

विशेष संवाददाता

दिल्ली। "...पैसा खुदा नहीं, लेकिन खुदा की कसम खुदा से कम भी नहीं...।" पांच-पांच सौ रुपये के नोटों की गड्डियां माथे से लगाते हुए केन्द्रीय वन एवं पर्यावरण मंत्री दिलीप सिंह जूदेव द्वारा बोला गया यह डायलाग देश की पूंजीवादी राजनीति में फैले भ्रष्टाचार की गहराई और चुनावी नेताओं की चरम बेहयाई का मुहावरा बन गया है। तहलका टेप काण्ड की तर्ज पर जूदेव को घूस की रकम हथियाते हुए धरा गया। इस घिनौनी चलती-बोलती तस्वीर को छुपे हुए वीडियो कैमरे ने उतार लिया। घूस की यह रकम एक आस्ट्रेलियाई खनन कम्पनी के देशी दलाल ने छत्तीसगढ़ और उड़ीसा में खनन का ठेका दिलाने की सिफारिश करने के लिए दिया था।

इस भण्डाफोड़ ने एक बार फिर नैतिकता, शुचिता, मर्यादा और सदाचार के ढिंढोरची भाजपाइयों की धोती खींचकर नंगा कर दिया है। तहलका काण्ड में तो उस समय के भाजपा अध्यक्ष बंगारू लक्ष्मण ने घूस की रकम लेना कबूल करते हुए सिर्फ यह कहकर अपने कुकर्म को जायज ठहराया था कि उन्होंने पार्टी के लिए चंदा लिया था। जूदेव तो चोरी के बाद सीनाजोरी करने में बंगारू के भी उस्ताद निकले। अपनी गन्दी जबान से इस घूसखोर ने अपने कुकर्म की तुलना भगतसिंह और चंद्रशेखर आजाद द्वारा लोगों से आर्थिक सहयोग लेने से कर डाली। अपनी घूस को 'धर्मान्तरण के खिलाफ जंग में सेना के लिए रसद लेना' बताते हुए उसने इन महान शहीदों के ऊपर भी गंदगी के छींटे उछाल देने की हिमाकत कर डाली। बात यहीं नहीं रुकी। आडवाणी तो बेहयाई में उस्तादों के उस्ताद निकले। इस घूसखोरी का बचाव करते हुए हिन्दुत्व

(पेज 5 पर जारी)

विकल्पहीनता का चुनाव

संसदीय लोकतंत्र की महानता नहीं उसका

घिनौनापन फिर से उजागर हुआ इन चुनावों में!

सम्पादक

लखनऊ। मध्य प्रदेश, राजस्थान और छत्तीसगढ़ के विधानसभा चुनावों में कांग्रेस की करारी शिकस्त और दिल्ली में कांग्रेस की सत्ता में वापसी के बारे में तरह-तरह के व्याख्या-विश्लेषण प्रस्तुत किये जा रहे हैं। टेलीविजन चैनलों और अखबार के पन्नों पर धुरन्धर चुनाव विश्लेषक गम्भीर मुद्रा ओढ़कर लोगों को तरह-तरह से यह समझाने- बताने की कोशिशें कर रहे हैं कि इन चुनावों ने एक बार फिर यह साबित कर दिया है कि हमारे देश में संसदीय लोकतंत्र की जड़ें कितनी गहरी हैं! महान भारतीय लोकतंत्र की जय हो! धन्य हैं देश के मतदाता और उनका चुनावी विवेक!

क्या सचमुच इन चुनाव नतीजों ने ठीक-ठीक वहीं साबित किया है जैसा कि कलम और बात के धनी ये चुनाव-विश्लेषक हमें समझा रहे हैं। अगर खुद इनके विश्लेषणों पर ही गौर किया जाये तो उनके नतीजों के उलट यही बात साबित होगी कि इन चुनावों ने संसदीय लोकतंत्र की महानता नहीं उसका घिनौनापन ही उजागर किया है। खुद इनके ही द्वारा प्रस्तुत चुनावी समीकरणों और आंकड़ों से असल में साबित सिर्फ यह होता है कि चुनाव नतीजे चुनावों के प्रति आम मतदाताओं की बेरुखी और विकल्पहीनता की देन हैं।

मध्यप्रदेश में पिछले दस सालों से सत्ता पर कुण्डली मारकर बैठे दिग्विजय सिंह अपने अति आत्मविश्वास के कारण गच्चा खा गये। भाजपा ने लोध जाति की सन्यासिन उमा भारती को आगे कर पिछड़ी जाति के वोटों को अपनी झोली में गिराने का जो दांव खेला और बिजली-सड़क-पानी को मुद्दा बनाकर आम शहरी मतदाताओं को अपने पक्ष में जिस तरह झुका लिया उसने दिग्विजय सिंह की 'सोशल इंजीनियरिंग' (यानी दलित-सवर्ण गंठजोड़ और एन.जी.ओ. मार्का हवाई सुधार कार्यों के जरिये चुनावी समीकरण अपने पक्ष में करने का दांव) को चारों खाने चित्त कर दिया। इसी तरह राजस्थान में गरीब सवर्णों

(पेज 6 पर जारी)

आपस में नहीं, बेरोजगारी के दानव से मिलकर लड़ो!

गरीब मजदूरों की हत्या करने वाले जनता के दुश्मन हैं! • रेलवे के तीन लाख पदों की कटौती पर उल्फा और शिवसेना के "जवांमर्द" चुप क्यों?

पिछले महीने असम और बिहार में क्षेत्रवादी झगड़ों ने जो भयंकर और वीभत्स रूप धारण किया वह सिर्फ एक संकेत है। पूंजीवादी विकास का रास्ता और पूंजीवादी राजनीति आगे भी क्षेत्रीय-जातीय-धार्मिक और भाषाई झगड़ों को जन्म देती रहेगी जो ऐसे ही घिनौने रूपों में समय-समय पर फूटते रहेंगे।

झगड़ों की शुरुआत तब हुई जब केन्द्रीय भर्ती बोर्ड की तरफ से खलासी के 20 हजार पदों के लिए करायी जा रही परीक्षा के दौरान असम में बिहार के बहुत से लोगों को बैठने से रोका गया। इन घटनाओं के विरोध में बिहार में कई ट्रेनों को रोककर असम ही नहीं, पूर्वोत्तर भारत के तमाम यात्रियों को मारा-पीटा गया, महिलाओं को बेइज्जत किया गया। इन बर्बर घटनाओं में कुछ छात्रों के साथ-साथ बहुत-से लंपट तत्व और भारतीय जनता पार्टी और समता पार्टी के कई कार्यकर्ता भी शामिल थे।

लेकिन इसके बाद असम में क्षेत्रीय नफरत की जो आंधी चली उसने 60 से अधिक लोगों की जान ले ली, सैकड़ों घर जला दिये गये और हजारों लोग घर और रोजगार से उजड़ गये। ये सारे लोग गरीब मेहनतकश थे जो रोजी-रोटी की तलाश में असम गये थे और मेहनत-मजदूरी करके किसी तरह जी रहे थे। इन कायराना हत्याओं के लिए उल्फा की जितनी भी निन्दा की जाये वह कम है। असमिया जनता के हित और स्वाभिमान के नाम पर गरीबों के खून की होली खेलने वाले ये बुजदिल अंधराष्ट्रवादी किसी भी रूप में जनता के प्रतिनिधि नहीं हो सकते।

उल्फा की गोलियों और उल्फा तथा 'आसू' जैसे संगठनों द्वारा उभाड़ी गई भीड़ की हिंसक घृणा का शिकार बनने वाले लोग वे नहीं थे जो मुनाफा बटोरने के लिए दूसरों का हक मारने कहीं भी पहुंच जाते हैं। ये लोग पूंजी की मार से अपनी जगह-जमीन से उजड़कर एक अनजान इलाके में पहुंचे थे ताकि अपनी मेहनत बेचकर जीने का मौका हासिल कर सकें—जिस तरह देश के तमाम पिछड़े इलाकों के करोड़ों लोग उजड़कर नये इलाकों में जाने को मजबूर हैं। उसी तरह जैसे असम के लाखों लोग रोजगार के लिए देश भर में फैले हुए हैं। ऐसे तमाम उजड़े हुए, बेरोजगारी की मार झेलते लोगों की एक साझा लड़ाई बनती है, लेकिन 'बांटो और राज करो' की राजनीति ऐसे हर मुद्दे का इस्तेमाल करती है जनता को आपस में बांटने के लिए। असम में सत्ता से बाहर हो चुकी असम गण परिषद ने इस आग में घी डालने का काम किया। मुख्यमंत्री तरुण गोगोई ने भी इस विस्फोटक माहौल में यह राग अलापना शुरू कर दिया कि रेलवे के निचले पदों की भर्ती में स्थानीय लोगों को प्राथमिकता मिलनी चाहिए।

ऐसे में शिवसेना भला क्यों चुप बैठती। आखिर "स्थानीय और बाहरी" की राजनीति की पहली ठेकेदार तो वही है। शिवसेना ने मुंबई में रेलवे भर्ती बोर्ड के दफ्तर में तोड़-फोड़ करके

(पेज 4 पर जारी)

बजा बिगुल मेहनतकश जाग, चिंगारी से लगेगी आग!

आपस की बात

मुनाफाखोरों के लिए पंतनगर की जमीन ही क्यों?

मैं पन्तनगर विश्वविद्यालय में ठेके पर काम करने वाला एक मजदूर हूं। मेरे बाबूजी भी यहीं काम करते थे। अब रिटायर हो गये हैं। मैं पिछले छह वर्षों से डेलीवेज पर काम करता था, लेकिन मई महीने से ठेकेदारी लागू होने के बाद अब ठेकेदार का आदमी हूं। अब मुझे पहले से पैसा भी कम मिलता है और यह डर भी लगा रहता है कि कब घर बैठा दिया जाये।

मैं 'बिगुल' के माध्यम से एक बात उठाना चाहता हूं। सुनने में आया है कि सरकार विश्वविद्यालय फार्म की 3300 एकड़ जमीन फैक्टरियां लगाने के लिए देने जा रही है। सरकार का कहना है कि फैक्टरियां लगेंगी तो विकास होगा, काम भी मिलेगा। लेकिन जब सभी जगह ठेकेदारी लागू है तो क्या नये लाला हमारी भर्ती करेंगे? श्रम कानून मालिकों के पक्ष में बन रहे हैं। हड़ताल पर सुप्रीम कोर्ट रोक लगा रहा है। तमाम कारखानों में 12-12 घण्टे खटने के बाद भी 40-50 रुपये की दिहाड़ी मिल रही है। डी.एम. एसडीएम, लेबर इंस्पेक्टर सभी मालिकों की भाषा बोलते हैं। ऐसे में इन नयी फैक्टरियों से क्या उम्मीद की जाये?

मेरे मन में एक और प्रश्न है। उद्योग लगाने के लिए बसे-बसाये और बहुत उपजाऊ पंतनगर की ही जमीन क्यों दी जा रही है? यहां के लोगों को तो वहां नौकरी की कोई बात नहीं हो रही है। हम तो यहां से उजड़ ही जायेंगे, लेकिन सरकार को हमारे बसाये जाने की कोई फिकर नहीं है। मेरे ख्याल से बगल के प्राग फार्म या खुरपिया फार्म की जमीनों पर कारखाने लगते और वहां काम करने वाले मजदूरों को उन कारखानों में नौकरी मिलती। ऐसा मैं इसलिए कह रहा हूं कि ये दोनों फार्म फर्जी तरीके से फार्मरों ने हड़प रखे हैं। इन जमीनों को भूमिहीनों में बांटने का आदेश भी आ चुका है, लेकिन मालिक और सरकार सब एक हैं इसलिए उस पर फार्मरों का कब्जा है। वहां के भूमिहीन मजदूर पट्टे के लिए लड़ भी रहे हैं। इस लड़ाई से दलाल नेताओं की खूब चांदी हो गयी है।

'बिगुल' के एक साथी बता रहे थे कि जमीन के छोटे-छोटे टुकड़े पा जाने से महज मालिक बनने का सपना पूरा होगा। आज की पूंजीवादी खेती के युग में छोटी जोत की जमीन बच ही नहीं सकती। बाहर मजूरी करके जमीन के इस टुकड़े को भले ही कुछ दिन वे बचा लें, इससे न तो उनकी बदहाल जिन्दगी बदलेगी और न ही ज्यादा दिन तक जमीन का टुकड़ा बचेगा। उनका कहना था कि लड़ाई इस बात की होनी चाहिए कि पूरे फार्म को सरकार अपने हाथ में ले ले और यहां के काम करने वाले सभी खेतिहर मजदूरों को वेतन पर वहां रखा जाये। वहीं पर उनके लिए कालोनियां बनें। मुफ्त अस्पताल, स्कूल और खेलने व मनोरंजन के साधन उपलब्ध हों।

बात तो बहुत अच्छी है। लेकिन अगर यह नहीं हो पा रहा है तो कारखाने पंतनगर की जगह वहीं लगते और वहां के मजदूरों को इनमें नौकरी की गारंटी होती। दूसरी तरफ पंतनगर में पहले की तरह अच्छी खेती हो सकती है। तब यहां इस वक्त रहनेवालों से दुगुने मजदूरों को काम मिलेगा। हां, अगर सरकार मजदूरों के पक्ष से सोचती तो हमें ब्लाकों के भीतर झोपड़पट्टियों में नहीं रहना पड़ता, हमारे लिए भी स्कूल होते, अस्पताल होता और रहने को पक्का मकान मिलता।

लेकिन क्या पूंजीपतियों की सेवा में लगी इस सरकार से भला कोई उम्मीद की जा सकती है? वह तो यहां की बेशकीमती जमीन मुनाफाखोरों को मुफ्त में दे देगी, उन्हें और सुविधाएं देगी और मजदूरों को उजाड़ती रहेगी।

– मनोज, पंतनगर

हड़ताल पर पाबन्दी से निरंकुशता बढ़ेगी

कर्मचारियों से हड़ताल करने का महत्वपूर्ण अधिकार नहीं छीना जाना चाहिए। हम बार-बार होने वाली हड़तालों का समर्थन नहीं कर रहे हैं लेकिन इसके साथ ही यह भी सही है कि अन्याय के विरोध में हड़ताल करने के अधिकार को इस तरह रद्द नहीं किया जा सकता है। हड़ताल करने पर पूरी तरह पाबंदी लगाया जाना न्याय के हित में नहीं होगा।

यह कहना एक हद तक अति होगा कि कर्मचारियों को हड़ताल पर जाने का कोई अधिकार नहीं है। हम इस बात के पक्ष में भी नहीं है कि कर्मचारी समाज को बंधक बनायें, इसकी इजाजत हमारी नैतिकता नहीं देती है। हड़ताल कामगारों का संरक्षित मौलिक अधिकार है। हड़ताल पर पाबन्दी लगाया जाना निरंकुश व्यवस्था की ओर ले जायेगा। हालांकि हड़ताल को पृथक रूप से किसी अधिकार की मान्यता नहीं है लेकिन इसे अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कामगारों के प्रबंधन के साथ सामूहिक वार्ता करने के अधिकार के तौर पर स्वीकृति प्राप्त है।

कामगार जब सामूहिक समझौते, बातचीत, मध्यस्थता और राज्य के हस्तक्षेप के अलावा कानूनी समाधान प्राप्त करने और न्यायाधिकरणों से विवादों का निपटारा करा पाने में विफल रहते हैं तो फिर उनके पास हड़ताल ही एकमात्र और अंतिम हथियार बचता है। जब कामगार किसी भी तरीके से अपना हक पाने में विफल हो जाता है तो उसके पास हड़ताल पर जाने के अलावा अन्य कोई चारा नहीं बचता और इसी अंतिम हथियार से वे अपने नियोक्ता पर दबाव बना सकते हैं।

– नवल किशोर
पीली कोठी, हल्द्वानी

बिगुल के पाठक साथियों और शुभचिन्तकों से एक अपील

'बिगुल' के पिछले सात वर्षों का सफर तरह–तरह की कठिनाइयों–चुनौतियों से जूझते गुजरा है। इस दौरान अनेक नये हमसफर हमारी टीम से जुड़े हैं और पाठक–साथियों का दायरा भी काफी बढ़ा है। कहने की जरूरत नहीं कि अब तक का कठिन सफर हम अपने हमसफरों और शुभचिन्तकों के संग–साथ के दम पर ही पूरा कर सके हैं। हालात संकेत दे रहे हैं कि आगे का सफर और अधिक कठिन और चुनौती भरा ही नहीं बल्कि जोखिमभरा भी होगा। हमें विश्वास है कि हम अपने दृढ़संकल्प और हमसफर दोस्तों की एकजुटता के दम पर आगे ही बढ़ते रहेंगे।

'बिगुल' अपने पुरअसर तेवर और अपने विशिष्ट जुझारू अंदाज के साथ आपके पास नियमित पहुंचता रहे, इसके लिए अखबार के आर्थिक पहलू को और अधिक पुख्ता बनाना जरूरी है। जाहिर है कि यह अपने संगी–साथियों और शुभचिन्तकों की मदद के बिना मुमकिन नहीं। हमारी आपसे पुरजोर अपील है कि :

- **बिगुल के स्थायी कोष के लिए अधिकतम संभव आर्थिक सहयोग भेजें।**
- **जिन साथियों की सदस्यता समाप्त हो चुकी है वे यथाशीघ्र नवीनीकरण करा लें।**
- **बिगुल के नये सदस्य बनायें।**
- **बिगुल के वितरण को और व्यापक बनाने में सहयोग करें।**
- **कुछ वितरक साथियों के पास बिगुल के कई अंकों की राशि बकाया है। इसे यथाशीघ्र भेजकर बिगुल नियमित प्राप्त करना सुनिश्चित कर लें।**

सहयोग राशि बैंक ड्राफ्ट या मनीऑर्डर से सम्पादकीय कार्यालय के पते पर भेजें। बैंक ड्राफ्ट 'बिगुल' के नाम से भेजें।

—सम्पादक

बिगुल का स्वरूप, उद्देश्य और ज़िम्मेदारियां

1. 'बिगुल' व्यापक मेहनतकश आबादी के बीच क्रान्तिकारी राजनीतिक शिक्षक और प्रचारक का काम करेगा। यह मज़दूरों के बीच क्रान्तिकारी वैज्ञानिक विचारधारा का प्रचार करेगा और सच्ची सर्वहारा संस्कृति का प्रचार करेगा। यह दुनिया की क्रान्तियों के इतिहास और शिक्षाओं से, अपने देश के वर्ग संघर्षों और मजदूर आंदोलन के इतिहास और सबक से मजदूर वर्ग को परिचित करायेगा तथा तमाम पूंजीवादी अफवाहों–कुप्रचारों का भण्डाफोड़ करेगा।

2. 'बिगुल' देश और दुनिया की राजनीतिक घटनाओं और आर्थिक स्थितियों के सही विश्लेषण से मजदूर वर्ग को शिक्षित करने का काम करेगा।

3. 'बिगुल' भारतीय क्रान्ति के स्वरूप, रास्ते और समस्याओं के बारे में क्रान्तिकारी कम्युनिस्टों के बीच जारी बहसों को नियमित रूप से छापेगा और स्वयं ऐसी बहसें लगातार चलायेगा ताकि मजदूरों की राजनीतिक शिक्षा हो तथा वे सही लाइन की सोच–समझ से लैस होकर क्रान्तिकारी पार्टी के बनने की प्रक्रिया में शामिल हो सकें और व्यवहार में सही लाइन के सत्यापन का आधार तैयार हो।

4. 'बिगुल' मजदूर वर्ग के बीच लगातार राजनीतिक प्रचार और शिक्षा की कार्रवाई चलाते हुए सर्वहारा क्रान्ति के ऐतिहासिक मिशन से उसे परिचित करायेगा, उसे आर्थिक संघर्षों के साथ ही राजनीतिक अधिकारों के लिए भी लड़ना सिखायेगा, दुअन्नी–चवन्नीवादी भूजाछोर "कम्युनिस्टों" और पूंजीवादी पार्टियों के दुमछल्ले या व्यक्तिवादी–अराजकतावादी ट्रेडयूनियनबाजों से आगाह करते हुए उसे हर तरह के अर्थवाद और सुधारवाद से लड़ना सिखायेगा तथा उसे सच्ची क्रान्तिकारी चेतना से लैस करेगा। यह सर्वहारा की कतारों से क्रान्तिकारी भरती के काम में सहयोगी बनेगा।

5. 'बिगुल' मजदूर वर्ग के क्रान्तिकारी शिक्षक, प्रचारक और आह्वानकर्ता के अतिरिक्त क्रान्तिकारी संगठनकर्ता और आन्दोलनकर्ता की भी भूमिका निभायेगा।

राहुल फाउण्डेशन का नया प्रकाशन

बोल्शेविक पार्टी का इतिहास

जे.वी. स्तालिन द्वारा लिखित और सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) की केन्द्रीय समिति के एक आयोग द्वारा सम्पादित यह पुस्तक सोवियत संघ में 1938 में छपी थी। यह पुस्तक दुनियाभर के कम्युनिस्टों के लिए एक अनिवार्य पाठ्यपुस्तक रही है, और आगे भी रहेगी। यह पुस्तक कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में मजदूर वर्ग द्वारा समाजवाद के लिए सफल संघर्ष और समाजवादी निर्माण के अनुभवों और सबकों का निचोड़ प्रस्तुत करती है। यह पुस्तक हमें सामाजिक विकास के नियमों के ज्ञान से लैस करती है तथा पूँजी और श्रम के बीच जारी विश्व ऐतिहासिक महासमर में समाजवाद की अपरिहार्य विजय में विश्वास पैदा करती है। निम्न-पूंजीवादी पार्टियों-गुटों, सभी प्रकार के अवसरवादियों, आत्मसमर्पणवादियों, जनता के दुश्मनों और पार्टी के भीतर वामपंथी दुस्साहसवाद तथा दक्षिणपंथी अवसरवाद की प्रवृत्तियों के खिलाफ समझौताहीन संघर्ष चलाते हुए तपकर निखरी बोल्शेविक पार्टी का यह इतिहास हर देश के क्रान्तिकारियों के लिए एक प्रकाशस्तम्भ है।

पृ. 360 मूल्य : 80 रुपये

प्रतियों के लिए जनचेतना के केन्द्रों से संपर्क करें

(पते के लिए देखें नीचे)

नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक बिगुल

सम्पादकीय कार्यालय	: 69, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006
सम्पादकीय उपकार्यालय	: जनगण होम्यो सेवासदन, मर्यादपुर, मऊ
दिल्ली सम्पर्क	: 29, यू.एन.आई. अपार्टमेण्ट, जीएच-2, सेक्टर-11, वसुंधरा-गाजियाबाद-201010
ईमेल	: bigulakhbar@hotmail.com

मूल्यः एक प्रति–रु. 3/- वार्षिक–रु. 40.00 (डाक खर्च सहित)

बिगुल

'जनचेतना' की सभी शाखाओं पर उपलब्ध :

1. डी-68, निरालानगर, लखनऊ-226020
2. जनचेतना स्टाल, काफी हाउस बिल्डिंग, हजरतगंज, लखनऊ (शाम 5 से 8 बजे तक)
3. जाफरा बाजार, गोरखपुर-273001
4. 989, पुराना कटरा, यूनिवर्सिटी रोड, मनमोहन पार्क, इलाहाबाद
5. जनचेतना सचल स्टाल (ठेला) चौड़ा मोड़, नोएडा (शाम 5 से 8)

मेहनतकश साथियों के लिए जरूरी कुछ पुस्तकें

कम्युनिस्ट पार्टी का संगठन और उसका ढांचा –लेनिन 5/-
मकड़ा और मक्खी –विल्हेल्म लीब्कनेख्त 3/-
ट्रेड यूनियन काम के जनवादी तरीके –सर्जी रोस्तोवस्की 3/-
अनवश्वर है सर्वहारा संघर्षों की अग्निशिखाएं 10/-
समाजवाद की समस्याएं, पूंजीवादी पुनर्स्थापना और महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति 12/-
क्यों माओवाद? 10/-
बुर्जुआ वर्ग पर सर्वतोमुखी अधिनायकत्व लागू करने के बारे में 5/-
मई दिवस का इतिहास 5/-
अक्टूबर क्रान्ति की मशाल 12/-
पेरिस कम्यून की अमर कहानी 10/-

बिगुल विक्रेता साथी से मांगें या इस पते पर 17 रु. रजिस्ट्री शुल्क जोड़कर मनीआर्डर भेजें: जनचेतना, डी-68, निराला नगर, लखनऊ।

एक बार फिर भूख से मौतें, फिर परोसा गया सरकारी झूठ

बिगुल संवाददाता

वाराणसी। मौत। भूख से बिलबिलाते बच्चों की मौत। अन्न के दानों के लिए तरसते, भूख मिटाने के लिए जहरीली घास और जंगली कुकुरमुत्तों को खाकर मरते बच्चे। मौत से छीना-झपटी करती अपने कलेजे के टुकड़े को छाती से लगाई हुई एक मां का रुदन, ''हमार बेटवा सूतल सूतल रह गइल। कोई देखे वाला ना है का खाई?'' ये दृश्य किसी रुलाने वाली फिल्म के नहीं, बल्कि जिन्दगी की हकीकत हैं। एक ऐसी नंगी सच्चाई जो इस समाज के मुंह पर तमाचा मार रही है।

उत्तर प्रदेश के सोनभद्र जिले के रोपा गांव में घसिया आदिवासियों के अठारह बच्चों की भूख से मौत हो गई। इन्हें बचाने कोई आगे नहीं आया। न नेताशाही, न नौकरशाही, न पूंजीशाही और न ही धर्म के ठेकेदार। लोकतंत्र के पहरेदार इस घटना से न तो परेशान है और न ही भुखमरी से निबटने के लिए कोई कार्रवाई करने को तैयार हैं। सरकारी अधिकारी निर्लज्जता के साथ सफेद झूठ बोलकर अपनी जिम्मेदारियों से मुकर रहे हैं। जिले का स्वास्थ्य अधिकारी अपनी रिपोर्ट में मौत का कारण कुपोषण बताता है तो एस डी एम को मौत की वजह बीमारियां और दुर्घटनाएं नजर आती हैं। सरकारी अधिकारी यह बताने से नहीं चूकते कि जिस घास को खाने से बच्चों की मौत बताई जा रही है, वह तो मेथी प्रजाति की घास है, वह जहरीली नहीं होती। हालांकि इस ''स्वादिष्ट घास'' को न इन अफसरों ने खाया होगा और न इसे अपने बच्चों को खिलाना पसन्द करेंगे। सरकारी सांड़ों को जो खाना चाहिए, वह श्मशान बने गांव में भी इन अफसरों को परोसा गया—मिठाई, समोसा और चाय।

भुखमरी के खिलाफ आवाज वहां के नौजवानों के एक संगठन ने उठाई। मानवाधिकार आयोग तक उन्होंने अपनी बात जन सतर्कता कमेटी के जरिए पहुंचाई। मानवाधिकार आयोग कुछ कर तो सकता नहीं, कुछ करने का अभिनय भर कर सकता है। आयोग ने ऐसा ही किया और शासन से इस दर्दनाक घटना पर जवाब मांगा। घुटे-घुटाये नौकरशाहों के लिए जवाब देना कोई मुश्किल काम नहीं है। नौकरशाहों के रवैये को सोनभद्र के कलेक्टर के बयान से ही समझा जा सकता है। मामला उछल जाने के बाद प्रशासन ने हर परिवार को पांच किलो चावल बंटवाया। चावल बंटवाने पर कलेक्टर और जिला आपूर्ति अधिकारी ने सफाई दी कि भुखमरी से कोई मौत नहीं हुई। अनाज तो मानवीय संवेदना की वजह से बंटवाया जा रहा है। इन संवेदनशून्य बेहया नौकरशाहों के बयान ''जनता के राज'' की लोकतंत्र की गंदी, घिनौनी असलियत को उघाड़ कर रख देते हैं। पिछले साल भी उड़ीसा, राजस्थान में फैली भुखमरी के बीच वहां के नेता-नौकरशाहों के ऐसे ही बयान आये थे।

सोनभद्र जिले में जहां एक ओर भूख से इंसान मर रहा है वहीं दूसरी ओर खनिज संपदा से भरपूर इस जिले में खनन माफिया, वन माफिया शासन-प्रशासन की मिलीभगत से करोड़ों रुपये लूट रहे हैं। यह है इस मानवद्रोही पूंजीवादी समाज का घृणित चेहरा—जहां मेहनत करने वाला भूखों मर रहा है, और दूसरों की मेहनत को लूटने वाली परजीवी जमात अपने ऐयाशी के टापुओं में सुअर की तरह लोटपोट रही है, राज-काज-समाज पर अवैध कब्जा जमाये हुए है। सोनभद्र अकेला उदाहरण नहीं है, देश के अलग-अलग हिस्सों में मेहनतकश भुखमरी से जूझ रहे हैं, थककर आत्महत्याएं कर रहे हैं। पिछले दिनों झारखंड के पलामू जिले के भाकसी गांव में मौत से जूझ रहे भुइया जाति के लोगों ने अपने जिला कलेक्टर को यह बताया कि कम वारिश के कारण वे फाकाकशी तक पहुंच चुके हैं तो कलेक्टर का जवाब था, ''बारिश इसलिए नहीं हुई कि तुमने पूरे मन से प्रार्थना नहीं की।'' अपने बाप का राज समझ कर ऐश कर रहे नेता-नौकरशाह ऐसे बयान दें तो आश्चर्य क्या? जनसंघर्षों के दबाव से पड़ने वाली लात की ही भाषा समझने वाले ये लोग तब शेर हो जाते हैं जब मेहनती जनता युद्ध का मैदान छोड़ याचना करने लगती है।

सोचने की बात यह है कि एक ऐसे समाज में जहां लोग भूख से मर रहे हैं, जिन्दगी से हारकर आत्महत्याएं कर रहे हैं, वहां ऐसी हृदयविदारक घटनाओं से कहीं कोई आग नहीं लग जाती, जीवन यथावत चलता रहता है। सोचने-समझने वाले लोगों को भी अपनी आत्मा में झांककर देखना होगा कि कहीं वहां भी आग के ऊपर मोटी राख की परत तो जमा नहीं हो गयी है। यदि आत्मा में कहीं कोई चिंगारी बची है तो जल्दी से जल्दी उसे अन्य चिंगारियों के साथ मिलाना होगा, तभी इस अंधेरे के खिलाफ मशाल जलाई जा सकती है, तभी सोई हुई आत्माओं को भी जगाया जा सकता है, तभी इस मानवद्रोही पूंजीवादी व्यवस्था को जलाकर भस्म किया जा सकता है।

पूंजीवादी व्यवस्था को जिलाये रखने के लिए अब कोई भ्रम नहीं बचा। भुखमरी के हालात इसलिए नहीं बन रहे कि देश में अनाज की कमी है। सच यह है कि अनाज के उत्पादन में भारी बढ़ोतरी हुई है। आज अनाज निर्यात किया जा रहा है। गोदामों में अनाज इसलिए सड़ रहा है कि उसे जरूरतमंदों तक पहुंचने नहीं दिया जा रहा। मुनाफे के लिए की जा रही खेती के बावजूद देश में इतना अनाज उत्पादन हो रहा है कि सभी आराम से भरपेट खा सकें। लेकिन ऐसा नहीं हो रहा। हकीकत यह है कि सबसे निचले पायदान पर खड़ी बीस फीसदी जनता लगातार भुखमरी से जूझ रही है, जबकि सबसे ऊपर के बीस फीसदी परजीवी अमीर जमातों के पास इतना धन-धान्य है कि उनकी कई पुश्तें आराम से खा सकती हैं। इस असमानता को दूर किये बिना अकाल और भुखमरी की समस्या का कोई स्थाई समाधान नहीं हो सकता। हालांकि कोई तात्कालिक राहत भी लड़कर ही हासिल हो सकती है और बीमारी को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए तो एक लम्बी लड़ाई की जरूरत है। एक ऐसे समाज के निर्माण की लड़ाई जिसमें उत्पादन या सभी सामाजिक सम्पदा बाजार और मुनाफे की ताकतों के चंगुल में नहीं बल्कि समाज की जरूरतों को पूरा करने के लिए हो।

उत्तरांचल राज्य गठन के तीन वर्ष –दूसरी किस्त

विकास की योजनाएं या विनाश की?

बिगुल टीम

उत्तरांचल राज्य गठन के तीन वर्ष पूरे होने पर प्रदेश की कांग्रेसी सरकार ने खूब शोर-शराबा करते हुए सरकारी उपलब्धियों के ढिंढोरे पीटे, विकास की नयी योजनाएं घोषित कीं और मुख्यमंत्री एन डी तिवारी ने घड़ियाली आंसू बहाते हुए राज्य आंदोलन के शहीदों की याद में बने शहीद स्मारक का लोकार्पण किया। और उत्तराखंड की मेहनती जनता अपने को ठगा-सा महसूस करते हुए सरकार की इस पूरी नौटंकी को देखती रही।

प्रदेश सरकार ने जिन विकास योजनाओं का हल्ला मचाया है, उसमें कहीं भी न तो आम मेहनतकश जनता के उत्थान की योजनाएं हैं, न भयानक बेरोजगारी की मार झेल रहे नौजवानों के रोजगार का कोई रास्ता है और न ही शराब व भू माफियाओं से मुक्ति की बात है। हां, वैश्विक व देशी लुटेरों की लूट के लिए कुछ और योजनाएं जरूर परोस दी गयी हैं।

राज्य गठन के तीन वर्ष (और कांग्रेसी सरकार के डेढ़ वर्ष) की उपलब्धि यह है कि उसने प्रदेश के महत्वपूर्ण व मुनाफे वाले सेक्टर विद्युत परिषद को निगम बनाया, उत्पादन, पारेषण व वितरण के रूप में इसके तीन हिस्से करके क्रमशः उसे निजी हाथों में सौंपने की शुरुआत कर दी। उत्तरांचल को ऊर्जा प्रदेश बनाने के नाम पर सरकार ने राज्य की जल विद्युत परियोजनाओं के क्रियान्वयन के लिए राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय लुटेरी संस्थाओं के साथ समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर कर दिया। उसने ई-गवर्नेंस तथा कम्प्यूटर साक्षरता की तथाकथित योजना के लिए साफ्टवेयर दुनिया में वैश्विक लुटेरों की सरगना अमेरिकी कम्पनी माइक्रोसाफ्ट के साथ समझौता कर लिया है।

राज्य के सबसे फायदे वाले पर्यटन उद्योग के विकास की ज्यादातर योजनाएं निजी क्षेत्र में सौंपी जा रही हैं। चारधाम परिपथ महायोजना की ज्यादातर योजनाएं निजी क्षेत्र के पूंजीनिवेश से क्रियान्वित होने जा रही हैं। हेमपुर इको सिटी महायोजना के लिए तो नामी-गिरामी उद्योगपति रुपये की थैली लेकर दौड़ भी पड़े हैं। जाहिरा तौर पर ये मुनाफाखोर धर्म खाते के लिए तो यहां आ नहीं रहे हैं। यह तो चट लगाओ पट मुनाफा पीटो का धंधा है। इसी क्रम में देहरादून में अमीरजादों के छोकरों के लिए 15 करोड़ रुपये की लागत से भारी-भरकम होटल मैनेजमेण्ट संस्थान बन रहा है। जबकि फीसों में लगातार बढ़ोत्तरी से बहुसंख्यक आम जनता के बच्चों के लिए उच्च शिक्षण संस्थानों के दरवाजे बंद होते जा रहे हैं। यही नहीं, सरकार ने शिक्षा क्षेत्र में निजी भागीदारी को बढ़ाते हुए उच्च शिक्षा के लिए निजी क्षेत्र में तीन ''विशेष शिक्षा'' प्रदान करने वाले विश्वविद्यालयों की स्थापना को हरी झंडी दे दी है।

राज्य में जारी नयी औद्योगिक नीति के तहत तो दुनिया भर की लुटेरी कम्पनियों को आकर्षित करने के ढेरों प्रावधान हैं, सब्सिडियों व छूटों का अम्बार लग गया है, लेकिन उनमें रोजगार मिलने की कहीं कोई भी गारण्टी नहीं है। पंतनगर कृषि विश्वविद्यालय के मजदूरों के खून-पसीने की मशक्कत से बने बेहद उपजाऊ 3300 एकड़ जमीन को औने-पौने दाम पर पूंजीपतियों को नये उद्योगों के लिए सौंपा जा रहा है और बसे-बसाये सैकड़ों लोगों को बेघरबार किया जा रहा है। इसी प्रकार हरिद्वार में बीएचईएल के निकट की 1200 एकड़ जमीन भी थैलीशाहों की भेंट चढ़ने वाली है। राज्य के प्रत्येक जिले से 30 एकड़ जमीन इन लुटेरों को दी जायेगी, लेकिन किसी भी उद्योगपति के लिए रोजगार देने की कोई भी बाध्यता नहीं रखी गयी है।

(पेज 11 पर जारी)

किन उपलब्धियों का जश्न मनाये उत्तराखण्ड की जनता?

बिगुल संवाददाता

9 नवम्बर को उत्तरांचल राज्य गठन के तीन वर्ष पूरा होने पर जहां एक तरफ प्रदेश सरकार जश्न मना रही थी और उपलब्धियों का ढिंढोरा पीट रही थी, वहीं दूसरी तरफ उत्तराखंड के तमाम जनवादी व संघर्षशील संगठनों के नेतृत्व में राजधानी देहरादून में 'जवाब दो हिसाब दो रैली' हो रही थी। इस रैली का आयोजन 'उत्तराखंड संयुक्त संघर्ष मोर्चा' ने किया था।

रैली से पूर्व गांधी पार्क में आयोजित सभा में वक्ताओं ने कहा कि उत्तराखंड की जनता आखिर किन उपलब्धियों की खुशियां मनाये। जनता के उत्तराखंड की जगह लुटेरों का उत्तरांचल मिला, गैरसैण की जगह धनपतियों की ऐशगाह देहरादून में राजधानी बनी। राज्य में शराब व भू-माफियाओं की जकड़बंदी और बढ़ी और यह नया राज्य देशी व साम्राज्यवादी लूट का नया केन्द्र बन गया। वक्ताओं ने कहा कि मुजफ्फरनगर कांड के हत्यारे अपराधियों को सजा मिलने की जगह यहां का उच्च न्यायालय उसको बरी करता है और सरकार तब तक मौन साधे रहती है जब तक कि यहां की जनता का गुस्सा उलबलकर सड़क पर नहीं आ गया।

देहरादून में 'जवाब दो, हिसाब दो रैली'

सभा के माध्यम से मुजफ्फरनगर कांड के मुख्य अभियुक्त तत्कालीन जिलाधिकारी अनन्त कुमार सिंह को फांसी देने, और गैरसैण को उत्तराखंड की राजधानी बनाये जाने की मांग पुरजोर ढंग से रखी गयी।

सभा के बाद एक रैली निकाली गयी जिसमें राज्य के विभिन्न हिस्सों से आये सैकडों कार्यकर्ताओं ने जोशीले तरीके से भाग लिया। रैली गांधी पार्क से निकलकर घण्टाघर, पल्टन बाजार, रेलवे स्टेशन होते हुए डी.एम. कार्यालय पर समाप्त हुई जहां ए.डी.एम. के माध्यम से राष्ट्रपति के नाम एक ज्ञापन भी भेजा गया। अन्त में कलेक्ट्रेट परिसर में स्थापित नवनिर्मित शहीद स्थल पर जाकर लोगों ने उत्तराखंड आंदोलन के शहीदों को श्रद्धांजलि अर्पित की।

इस रैली के माध्यम से सच्चा उत्तराखंड हासिल करने, गैरसैण को राजधानी बनाने व मुजफ्फरनगर कांड के अपराधियों को सजा दिलाने तक संघर्ष जारी रखने का संकल्प बांधा गया। रैली में यह संकल्पबद्धता साफ दिखाई पड़ रही थी और साथ ही संघर्षों की दिशा पर विचार मंथन का भाव भी उभरकर सामने आ रहा था।

आज उत्तराखंड की संघर्षशील जनता के अगुआ तबके को अतीत का सिंहावलोकन करते हुए भविष्य के संघर्षों की एक दिशा तय करनी ही है। मुजफ्फरनगर कांड के अपराधियों को सजा दिलाने और गैरसैण को राजधानी बनाने की मांगों पर बने संयुक्त मोर्चे की एक अच्छी पहलकदमी रही है, लेकिन किसी भी संयुक्त मोर्चे की अपनी सीमाएं होती हैं। कुछ सवालों पर सोचा जाना आज बेहद जरूरी है। तमाम विशिष्टताओं के बाद भी उत्तराखंड की मेहनतकश जनता की कमोबेश वही राजनीतिक, आर्थिक मांगें बनती हैं, जो देश के अन्य हिस्सों के मजदूर-मेहनतकशों की। यह सच है कि देश के अलग-अलग क्षेत्रों में अपनी मांगों को लेकर छिटपुट लड़ाइयां मेहनतकश लड़ रहे हैं, लेकिन उनमें आपस में सामंजस्य नहीं है। आज देशव्यापी स्तर पर एक क्रान्तिकारी राजनीतिक केन्द्र का अभाव इस तालमेल को मुश्किल बना रहा है। भूमण्डलीकरण के इस दौर में, जिस बात को आम जनता लड़ते हुए सीख रही है और जिसे इतिहास और समाज परिवर्तन के विज्ञान का विद्यार्थी समझ रहा है वह यह है कि आज मेहनतकश जनता के किसी भी तबके का कोई भी संघर्ष साम्राज्यवाद- पूंजीवाद विरोधी संघर्ष का ही एक अंग हो सकता है। संघर्षों को आगे बढ़ाते हुए आंदोलनपंथ, स्वतःस्फूर्ततावाद, राष्ट्रीयतावाद, संकीर्णता जैसे भटकावों से बचना होगा जो देश के अलग-अलग हिस्सों में हो रहे आंदोलनों में दिखाई पड़ रहे हैं।

एक बात पर खास तौर पर सोचने की जरूरत है कि समाज में चाहे जितनी स्वतःस्फूर्त हलचलें पैदा होती रहें, किसी भी लड़ाई को तब तक अंजाम तक नहीं पहुंचाया जा सकता जब तक कि क्रान्तिकारी विचारधारा और भावना से लैस कोई मजबूत राजनीतिक केन्द्र उन्हें समन्वित न करे। ●

श्रम विभाग के ढोल की पोल

बिगुल संवाददाता

दिल्ली। एक रपट के अनुसार दिल्ली सरकार के श्रम विभाग ने दावा किया है कि दिल्ली में प्रत्येक मजदूर को न्यूनतम मजदूरी मिल रही है। गौरतलब है कि 20 जून 2003 को श्रम विभाग ने न्यूनतम मजदूरी की नयी दरें घोषित की थी, जिसके अनुसार अकुशल मजदूर को 107.10 रुपये, अर्धकुशल मजदूर को 113.50 रुपये तथा कुशल मजदूर को 123.40 रुपये प्रतिदिन मिलने चाहिए। इन दरों को देखकर किसी भी दिहाड़ी मजदूर को हंसी आ सकती है। उसके लिए इतने पैसे मिलना सिर्फ ख्वाब की चीज हो सकती है। लेकिन श्रम विभाग को इसमें कोई आश्चर्य नजर नहीं आता कि दिल्ली की सवा लाख फैक्टरियों में कार्यरत सभी मजदूरों को न्यूनतम मजदूरी मिल रही है।

इस रपट का सबसे दिलचस्प पहलू वह तरीका है जिसके द्वारा श्रम विभाग के इंस्पेक्टर न्यूनतम मजदूरी नहीं देने वाले फैक्टरी मालिक को बचाते हैं। ये इंस्पेक्टर मिलीभगत करके न्यूनतम मजदूरी न देने का चालान काटने की बजाय मजदूरी या हाजिरी का रिकार्ड पेश न कर पाने का चालान काट देते हैं। नतीजन फैक्टरी मालिक थोड़े से नुकसान से मजदूरों को न्यूनतम मजदूरी देने के कानूनी प्रावधान से छुटकारा पा लेते हैं।

यदि दिल्ली सरकार के श्रम विभाग नाम के सफेद हाथी पर नजर डाली जाये तो उसमें श्रम-आयुक्त से लेकर सहायक श्रमायुक्त तक 20 शीर्ष स्तर के तथा इंस्पेक्टर स्तर के कई सौ अधिकारी काम करते हैं। श्रम विभाग को कारखाना कानून, कामगार मुआवजा कानून, न्यूनतम मजदूरी कानून, बोनस कानून, ग्रेच्युटी कानून व समान मजदूरी कानून लागू करवाने होते हैं। इतने सारे कानूनों को लागू करवाते हुए श्रम विभाग को अनियमितताओं की छुटपुट जानकारी ही मिलती है। पिछले कुछ सालों में श्रम विभाग की रपट के अनुसार न्यूनतम मजदूरी कानून के उल्लंघन का एक भी मामला नहीं पाया गया। सभी मजदूरों को पूरा, समय पर तथा प्रतिवर्ष बोनस मिल रहा है। 1996 से 2001 तक पूरी दिल्ली में सिर्फ क्रमशः 7,4,5,10,9 और 10 फैक्टरियों में बोनस नहीं दिया गया। आये दिन बॉयलर फटने से मजदूरों के घायल होने और मरने की खबरें अखबारों में आती रहती हैं लेकिन श्रम विभाग को 1996 से किसी फैक्टरी में बॉयलर संबंधी कोई लापरवाही दिखायी नहीं दी। दिल्ली में औरतों व बच्चों को समान काम के लिए समान मजदूरी मिलती है। आम मजदूरों को असमान मजदूरी मिलने की कोई जानकारी विभाग के पास नहीं है। दिल्ली की किसी फैक्टरी में बाल श्रम का कोई मामला नहीं पकड़ा गया। यहां पर ठेका मजदूरों का कोई भी विवाद नहीं है।

ये सारे दावे अगर दिल्ली के मजदूरों को पता चल जायें तो उनको शायद भरोसा ही नहीं होगा कि सरकारी फाइलों में वो कितने सुख से रह रहे हैं। इसमें कोई शक नहीं कि ये आंकड़े सिर्फ और सिर्फ झूठ का पुलिंदा है। अगर हम नरेला, बवाना, मायापुरी, ओखला और बादली की फैक्टरियों में मजदूरों की स्थिति देखें तो इन आंकड़ों की सच्चाई बेपर्दा हो जायेगी। इससे साफ हो जाता है कि पूंजीवादी शैतानी व्यवस्था के कल्याणकारी राज्य का उदार चेहरा धीरे-धीरे धूमिल हो रहा है। भूमंडलीकरण व खुले बाजार की दुहाई देकर उद्योगों को श्रम कानूनों के घेरे से बाहर लाया जा रहा है और मजूदरों को कुछ राहत (चाहे थोड़ी सी ही हो) देने का नाटक भी अब बन्द किया जा रहा है।●

...बेरोजगारी के दानव के खिलाफ मिलकर लड़ो!

(पेज 1 से आगे)

परीक्षा रद्द करवा दी और बाल ठाकरे ने तो यह तक कह डाला कि असम में गरीब बिहारी लोगों पर जो कहर ढाया जा रहा है वह उसके आंदोलन का ही विस्तार है।

गरीबों की लाशें बिछाकर और उनके घर उजाड़कर अपनी बहादुरी का डंका बजाने वाले इन तमाम संगठनों और नेताओं की जवांमर्दी तब दिखाई नहीं पड़ी जब कुछ ही दिन बाद यह खबर छपी कि 2010 तक रेलवे की नौकरियों में तीन लाख पदों की कटौती की जायेगी। अगर उल्फा और शिवसेना के जवान ऐसे ही बहादुर थे तो क्यों नहीं रेल मंत्रालय पर धावा बोल दिया? रेल मंत्री और रेलवे बोर्ड के अफसरान के खिलाफ आग क्यों नहीं उगली? नहीं, इस मुद्दे पर तो उनकी चूं भी नहीं निकली। समस्या की जड़ पर चोट करते तो बार-बार लोगों को आपस में लड़ाने के लिए मुद्दे कैसे पाते!

असलियत यह है कि रेलवे की 18 लाख नौकरियां घटते-घटते आज 15 लाख से भी कम रह गई हैं। इसमें तीन लाख की और कटौती होने वाली है। वर्षों से नई भर्तियां बंद हैं। खलासी के जिन 20 हजार पदों के लिए यह मार-काट हुई वह भी वर्षों बाद निकले हैं। बेरोजगारी की स्थिति कितनी भयंकर है, इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि 20 हजार पदों के लिए देश भर से 75 लाख लोगों ने आवेदन किया था, यानी एक पद के लिए 375 लोग। बीस हजार नियुक्तियां बिना किसी भ्रष्टाचार के हो जातीं तब भी 74 लाख 80 हजार बेरोजगारों को तो निराश ही होना पड़ता। जिस खलासी को देखकर पढ़े-लिखे लोग नाक-भौं सिकोड़ते हैं, उसी नौकरी के लिए आवेदन करने वालों में बीए, एमए ही नहीं एमबीए और इंजीनियरिंग की डिग्री लिये हुए नौजवान भी थे। मुंबई में 2200 पदों के लिए साढ़े छह लाख, कोलकाता में 2000 पदों के लिए 12 लाख और हैदराबाद में 2700 पदों के लिए 12 लाख लोग लाइन में थे।

बेरोजगारी की हालत इतनी भयानक है कि पूंजीवादी व्यवस्था के हितचिंतक सरकार को बार-बार चेतावनी दे रहे हैं। देश में हरित क्रान्ति का खाका तैयार करने वाले प्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक एम.एस. स्वामीनाथन ने हाल ही में चेताया कि खेती से उजड़ रहे गरीब भूमिहीन लोगों को अगर रोजगार नहीं मुहैया कराया गया तो नौकरियों के लिए देशभर में दंगे भड़क सकते हैं।

लोगों को उजाड़कर, बेरोजगारों की भारी फौज खड़ी करके मनमानी शर्तों पर उनके श्रम को लूटने वाली इस व्यवस्था में सबको रोजगार मिल ही नहीं सकता। व्यवस्था के पैरोकार लाख चेतावनी देते रहें, लुटेरे अपना काम करते रहेंगे और नये-नये हथकंडों की तलाश में चुनावबाज नेता लाशों की बिसात पर खूनी शतरंज खेलते रहेंगे। असम और बिहार की घटनाएं एक खतरनाक इशारा हैं आने वाले दिनों की ओर। जनता को इस साजिश को पहचानना होगा। हमें आपस में बांटने वाली राजनीति को समझना होगा और बेरोजगारी के उस दानव के खिलाफ मिलकर लड़ना होगा जो हर साल सैकड़ों जिंदगियों की बलि ले लेता है। ●

...नक्कालों से सावधान!

(पेज 6 से आगे)

नहीं चलता। जिस राह पर नकली वामपंथी चलते हैं उसमें उनकी दुर्गति होनी ही है। पर तब तक ये क्रान्तिकारी आंदोलनों और मजदूर वर्ग पर इतने घात कर चुके होते हैं कि पूंजीवाद की मुरादें पूरी हो जाती हैं।

दरअसल संशोधनवाद यानी नकली वामपंथ और कुछ नहीं बल्कि बुर्जुआ विचारधारा ही है। हर क्षेत्र में आमने-सामने की लड़ाई में मार्क्सवाद से मुंहकी खाने के बाद पूंजीपति वर्ग की विचारधारा भेष बदलकर पीठ पीछे से वार कर रही है। दुनिया के मजदूर आंदोलन के ये भितरघाती हैं, पूंजीपति वर्ग के एजेण्ट हैं। मजदूर आंदोलन की क्रान्तिकारी विचारधारा मार्क्सवाद के पैदा होने के साथ ही इनकी भी पैदाइश हुई थी। ये मजदूरों को सिर्फ आर्थिक लड़ाइयों और संसदीय चुनावी राजनीति में ही उलझाये रखना चाहते हैं।

मार्क्स-एंगेल्स-लेनिन-स्तालिन-माओ जैसे नेताओं और शिक्षकों ने इन भितरघातियों के खिलाफ जमकर संघर्ष चलाया और मजदूर वर्ग को इनसे होशियार रहने की सलाह दी है। सीटू और एटक जैसी यूनियनें और सीपीआई सीपीएम जैसी पार्टियां ऐसी ही हैं। देश के मजदूर आंदोलन के नेतृत्व पर जब तक इनका कब्जा बरकरार रहेगा तब तक आंदोलन क्रान्तिकारी मोड़ नहीं ले पायेगा। इसलिए हर वर्ग सचेत मजदूर को आम मजदूर आबादी के बीच इनका लगातार भण्डाफोड़ करते रहना होगा। उन्हें आगाह करना होगा—नक्कालों से सावधान!

– मोहन

कंट्रोल एण्ड स्विचगियर के मजदूरों को सुपरवाइजर का मंत्र

'आदमी का मतलब मशीन, चलते रहना है, थकना नहीं'

बिगुल संवाददाता

नोएडा। ''नंगे होकर, दिल खोलकर, बैल बनकर काम करो, पिल जाओ पिल। जी-जान एक कर दो। आज माल कल से भी अधिक जाना है। भले ही कोई मर जाये, काम नहीं रुकना चाहिए। पकी-पकाई खाते हो, पकाकर खाना सीखो। हमारी शराफत का नाजायज फायदा उठा रहे हो। कम्पनी को लूट रहे हो लूट। आदमी का मतलब मशीन, जिसे चलते रहना है, थकना नहीं। जो थकेगा, वह गेट से बाहर होगा' ये ''मधुर वचन'' हैं कंट्रोल एण्ड स्विच गियर कम्पनी के एक सुपरवाइजर के, जो वह मजदूरों पर उलीचता रहता है।

कंट्रोल एण्ड स्विचगियर वही कम्पनी है जहां अभी डेढ़ साल पहले मैनेजमेण्ट ने शासन-प्रशासन की मिलीभगत से मजदूरों के आंदोलन को कुचला था। भूतपूर्व जज पी.एन. खन्ना के मालिकाने वाली इस कम्पनी की चार इकाइयां हैं। बिजली के स्विच, चेंज ओवर, एयर सर्किट ब्रेकर जैसे सामान बनाने वाली इस कम्पनी में मजदूरों के हालात पहले से बदतर हुए हैं। यहां भी मजदूर की जिन्दगी उसी नीरस दायरे में कैद है जैसी और कारखानों की। मुंह अंधेरे काम पर जाना और रात में काम से लौटकर आना। दिन भर की हाड़तोड़ मेहनत के बाद फिर अगले दिन की चिन्ता कि कहीं मैं काम पर देर से न पहुंचू, मालिक डांटने न लगे, कहीं निकाल बाहर न करे। मेरा काम औरों से कम न हो।

कंट्रोल एण्ड स्विचगियर कम्पनी हर माह करीब 7 से 8 करोड़ का माल तैयार करती है, जिसका ज्यादा भाग विदेशों को निर्यात हो जाता है। बेहिसाब मुनाफा पीटने वाली इस कम्पनी में 18 से 20 वर्ष तक काम कर चुके मजदूर भी साढ़े तीन हजार से चार हजार रुपये के आसपास पगार पाते हैं। महंगाई भत्ते, एग्रीमेण्ट और अन्य भत्तों के लिए तो जुबान पर ताला लगाकर रखना होता है। ऐसा नहीं है कि कंट्रोल एण्ड स्विच गियर कम्पनी के मजदूरों ने मालिकान के जोरो-जुल्म और शोषण के खिलाफ कभी आवाज ही न उठाई हो। 1991 में मजदूरों ने अपनी जुझारू एकता और संघर्ष के दम पर मालिकान को तीन वर्षीय वेतन समझौते के लिए बाध्य किया था। मैनेजमेण्ट ने दो बार इस समझौते को लागू किया लेकिन तीसरी बार वह मुकर गया। इस बार मालिकान ने पूरी तैयारी के साथ मजदूरों की एकजुटता पर हमला बोला। मालिकान की बदली हुई रणनीति में मजदूरों के नेतृत्व का कमजोर हिस्सा टूट गया और शेष नेतृत्व सही दिशा और नई रणनीति के साथ आंदोलन को आगे न ले जा सका।

आज करीब डेढ़ वर्ष बीतने के बाद भी उस संघर्ष को याद करना और उससे सबक निकालना बेहद जरूरी है। कंट्रोल एण्ड स्विचगियर के मजदूर भी इंसान हैं, और जिन्दा आदमी अन्याय और शोषण के खिलाफ हमेशा ही बगावत करता रहा है। निश्चित तौर पर स्विचगियर कं. के मजदूर एक बार फिर निराशा के अंधेरे से बाहर आयेंगे और संघर्ष की राह पकड़ेंगे। लेकिन अपने पिछले अनुभव और देश दुनिया के हालातों को समझते हुए उन्हें कुछ बातों पर आज गम्भीरता से सोचना होगा। आज हालात बदले हुए हैं। इलाके के कारखानेदार ही नहीं देश-दुनिया के लुटेरे मजदूर वर्ग पर एकजुट होकर हमला बोल रहे हैं। शासन-प्रशासन ही नहीं, न्यायपालिका तक पूंजीपतियों के हितों की रक्षा में खुलकर सामने आ गई है। सारी की सारी चुनावबाज पार्टियां मजदूरों-मेहनतकशों की जिन्दगी को तबाह-बर्बाद करने वाली नीतियां बनाने और लागू करने के मामले में एकमत हैं। चुनावबाज पार्टियों से जुड़े ट्रेड यूनियन नेता मजदूरों की पीठ में छुरा भोंकने का काम कर रहे हैं।

इन हालात में संघर्षों की एक लम्बी तैयारी ही जीत की गारण्टी हो सकती है। दलालों और नकली लड़ाकों को लतियाकर अपना सही, समझदार और जुझारू नेतृत्व विकसित करना होगा, जो कुएं का मेढक न हो और न किसी चुनावबाज पार्टी का पुछल्ला बने। जो कारखाने के अन्दर तो मजबूती से खड़ा ही हो, साथ ही इलाके की व्यापक मजदूर एकजुटता के लिए भी दिन रात एक करे। यदि भावी संघर्षों की अभी से तैयारी शुरू नहीं की गई, तो भविष्य में हालात आज से भी बुरे होंगे।

एक संघर्ष में मिली हार ने पूरी कम्पनी में फिलहाल मजदूरों को पस्त कर दिया है। तमाम स्थाई मजदूरों को तो मैनेजमेण्ट ने पहले ही निकाल दिया था। उनके स्थान पर रखे गये कैजुअल और ठेके के मजदूरों का जमकर शोषण किया जा रहा है। पहले के मुकाबले काम का दबाव बहुत बढ़ गया है। महीने में पूरे तीसों दिन बारह से चौदह घण्टे काम लिया जा रहा है। मैनेजमेण्ट जब चाहे काम पर रखता है, जब चाहे निकाल बाहर करता है। मजदूरों के सामने अब दो ही रास्ते बचे हैं या तो ऐसे ही अकेले-अकेले घुट-घुटकर जीते रहें या फिर इन हालात को बदलने के लिए अभी से संघर्षों की तैयारी में जुट जायें।

●

फिर चुनाव?
क्या अब भी कोई उम्मीद
बाकी बची है?
रोज–रोज तुम अपनी ही
कब खोदते रहोगे
तो इस जालिम हुकूमत की
कब कौन खोदेगा?
चुन लो – कौन सी राह?
इलेक्शन या इंकलाब?

(पेज 4 पर जारी)

खटीमा फाइबर में एक और मजदूर की मौत से उठे सवाल

क्या यह महज एक दुर्घटना है?

बिगुल संवाददाता

खटीमा (ऊधमसिंह नगर)। कागज बनाने वाले स्थानीय कारखाने खटीमा फाइबर्स लिमिटेड का एक और मजदूर दुर्घटना का शिकार होकर मौत के आगोश में समा गया। दुर्घटनाओं में मरना यहां के मजदूरों की नियति बन चुकी है।

कारखाने में इस बार दुर्घटना का शिकार हुआ राकेश नाम का एक मजदूर जो महज चार माह से यहां ठेकेदारी में काम करता था। पिछले 25 नवम्बर को काम करते हुए वह डायजेस्टर में गिर गया। उसका मुंह व सिर बुरी तरह से जख्मी हो गया। आनन-फानन में उसे प्रबंधकों ने एक स्थानीय निजी चिकित्सालय में भर्ती कराया। हालत की गंभीरता को देखते हुए उसे डाक्टरों ने बरेली भेज दिया, जहां उसे बाद में मृत घोषित कर दिया गया। प्रबंधकों ने फिर इसे एक दुर्घटना करार दिया। सवाल यह उठता है कि क्या यह महज एक दुर्घटना है?

डेढ़ वर्ष पूर्व (11 मई, 2001) को भी इसी कारखाने में डाइजेस्टर फटने से निकले भाप व खौलते पल्प के गिरने से छह मजदूर बुरी तरह झुलस गये थे जिनमें से तीन मजदूरों की दस दिनों के भीतर मौत हो गयी थी और तीन लम्बे समय तक जीवन-मरण का संघर्ष करते रहे। ये सभी मजदूर नियमित थे। प्रबंधन के लाख दबाने के बावजूद यह मुद्दा उस वक्त इतना गरम हो गया था कि सरकार को घटना की जांच का आदेश देना पड़ा था। इस घटना के एक माह पूर्व ही एक महिला मजदूर डाइजेस्टर की भाप से बुरी तरह झुलस गयी थी और उससे पूर्व भी यहां ऐसी घटना हो चुकी थी।

पिछली घटना के बाद हल्द्वानी व देहरादून के सहायक कारखाना निदेशकों ने अपनी जांच रिपोर्ट में कारखाने में सुरक्षा सम्बन्धी खामियां पायी थीं। जिसके आधार पर उत्तरांचल के श्रमायुक्त ने फैक्टरी मालिक के खिलाफ मुकदमा कायम करने का निर्देश दिया था। जांच रिपोर्ट में यह साफ तौर पर लिखा था कि डाइजेस्टर में सेफ्टी वाल्व ही नहीं था और डाइजेस्टर के नीचे काम करने की पद्धति भी दोषपूर्ण थी। यही नहीं, हर छह माह में सक्षम व्यक्ति द्वारा निरीक्षण करवाकर प्रमाणपत्र पाने के नियम का भी पालन नहीं किया गया था। यहां तक कि डायजेस्टर के ढक्कन की गैस्केट तक ठीक ढंग से चेक नहीं की गयी थी।

उस वक्त प्रबंधन ने इस जांच रिपोर्ट को धता बताते हुए अपनी स्वयं की जांच में एक अन्य मजदूर को दोषी करार देते हुए उसका डिमोशन कर दिया था।

सरकारी जांच रिपोर्ट धरी की धरी रह गयी। हत्यारा मालिक गिरफ्तार तक नहीं हुआ, मुकदमा ठंडे बस्ते में चला गया, कारखाना वैसे ही चलता रहा, मालिक मुनाफा पीटता रहा, मजूदर मौत के मुंह में काम करते रहे और अंततः राकेश इसका शिकार बन गया। ठीक वैसे ही जैसे बेरोजगारी की मार झेलते नौजवान दो वक्त की रोटी के लिए बेहद कठिन व अत्यधिक असुरक्षित परिस्थितियों में देश के तमाम कारखानों में 12-12 घण्टे खट रहे हैं और मालिकों के लिए मुनाफा कमाने के औजार बने हुए हैं। जाने कितने आये दिन मौत के मुंह में समा जा रहे हैं। और संवेदनहीन शासन-प्रशासन श्रम विभाग मूकदर्शक बना देखता रहता है। निश्चित रूप से राकेश जैसों की मौत कोई दुर्घटना नहीं होती है बल्कि मुनाफाखोरों की अंधी हवस का परिणाम है? असल हत्यारा ही मालिक होता है और शासन-प्रशासन व श्रम विभाग इसके साझीदार होते हैं।

खटीमा फाइबर्स ऐसा ही एक कारखाना है, जिसका मालिक आर.सी. रस्तोगी एक बड़े फार्म हाउस का भी मालिक है, जिसके जालिमाना कारनामों की पूरी एक फेहरिस्त है। उसने कारखाने में कभी यूनियन नहीं बनने दी। 6-7 वर्ष पूर्व ऐसे प्रयास यहां हुए भी, हड़तालें भी हुईं, लेकिन उसने अपने पालतू गुण्डों व पुलिस के दम पर उसे बर्बरतापूर्वक कुचल दिया था, नेतृत्वकारी सभी मजदूर झूठे मुकदमों में जेल भेज दिया गया। उन्हें नौकरी से भी हाथ धोना पड़ा था। आज भी वे मजदूर कचहरी की तारीखें झेल रहे हैं जबकि कई निर्दोष मजदूरों का हत्यारा यह मालिक छुट्टा सांड़ बना घूम रहा है। यह देश के उन बर्बर मालिकों में से एक है जो बात-बात में मजदूरों की पिटाई तक कर देता है और जो सारे नियम-कानून अपनी जेब में लिये घूमते हैं। जो न जाने कितनी जिन्दगियां लील चुके हैं।

बहरहाल, पिछले हादसे के बाद उठे बवाल के मद्देनजर प्रबंधन ने 50 हजार रुपये मुआवजे की घोषणा करके अपना पल्लू झाड़ लिया है। ठेकाकर्मी होने के कारण राकेश के परिजनों को और कुछ मिलने से रहा। और फिर कुछ मिल भी जाता तो क्या उसकी जिन्दगी वापस आ सकती है? यह पूंजीवादी मानवद्रोही व्यवस्था मुनाफे की अंधी हवस में आये दिन कितने राकेशों को निगल जा रही है, इसका कहीं कोई लेखा-जोखा भले ही न हो, लेकिन मजदूरों के भीतर जो गुस्सा पनप रहा है वह एक न एक दिन विस्फोट का रूप जरूर लेगा और तब इन जालिम-बर्बर मुनाफाखोरों की अन्तिम क्रिया करके ही शान्त होगा।

कारखाने के खौफजदा मजदूर भारी मन से अपने काम पर पूर्ववत जरूर लगे हुए हैं, लेकिन उन्हें सोचना ही होगा कि आखिर कब तक वे अपनी दुर्दशा को, अपने भाइयों की मौत को चुपचाप देखते और सहते रहेंगे?

पूंजीवाद से सदाचार की कैसी उम्मीद!.

(पेज 1 से आगे)

के इस संघी ठेकेदार ने जूदेव को 'धर्मयोद्धा' का तमगा देते हुए कहा कि उसकी पार्टी इस काण्ड से शर्मिन्दा नहीं है। तहलका की इस नयी कड़ी ने मैले में डूबे सदाचार के अलमबरदारों की बेहयाई का ऐसा नमूना पेश किया है कि गन्दगी के ढेर पर मुंह मारने वाले सुअर भी शर्मा जायें।

भाजपाइयों को जूदेव की घूसखोरी पर जरा भी शर्म नहीं। उन्हें तो इस बात पर गुस्सा आया कि घूसखोरी की जीती-जागती तस्वीर वीडियो कैसेट में कैद करने की हिमाकत अजीत जोगी के बेटे ने कैसे कर दी। इसका बदला भी उन्होंने आनन-फानन में उतार लिया। विधानसभा चुनावों के नतीजे आने के अगले ही दिन उन्होंने भाजपा की सरकार न बनने देने के लिए छत्तीसगढ़ के दो भाजपा विधायकों को घूस देने की बात करते अजीत जोगी की आवाज को आडियो कैसेट में बंद कर लिया। भाजपाइयों ने जोगी का वह पत्र भी बरामद कर अखबारों में छपवा दिया जिसे उन्होंने भाजपा तोड़कर बननेवाली सरकार को कांग्रेस का समर्थन देने के लिए लिखा था। जोगी के फंस जाने के बाद ईमानदारी के पुतले के रूप में खुद को पेश करने वाले कांग्रेसियों की बोलती बंद हो गयी। जूदेव काण्ड ने कांग्रेसियों के सभी पुराने कुकर्मों को थोड़ी देर के लिए जनता की यादों से ओझल कर दिया होगा। लेकिन जोगी ने यह याद दिलाने का खुद ही मौका दे दिया कि भ्रष्टाचार के मामले में कांग्रेसियों ने तो रास्ता दिखाने का काम किया है। इस नये भण्डाफोड़ के बाद आडवाणी जी एक बार फिर हाथ मलते हुए गुर्राये, जूदेव ने तो पार्टी के लिए चंदा लिया था जबकि जोगी ने सत्ता के लिए घूस दी।

अब नजारा बेहद दिलचस्प हो उठा है। बाजार में नंगों की सवारी निकाली है और सभी नंगे एक-दूसरे को नंगे-नंगे कहते हुए मुंह बिचका रहे हैं। एक दिलचस्प चीनी कहानी 'नंगा राजा' की याद ताजा हो उठी है (देखें इसी अंक में पृष्ठ 10 पर)। लेकिन कहानी में तो सिर्फ एक नंगा राजा था। यहां तो नंगों का बाजार सजा हुआ है।

बोफोर्स, हवाला, शेयर, अलकतरा, चीनी, यूरिया, चारा, वर्दी, तहलका, ताबूत, स्टाम्प घोटाला के बाद अब तहलका के नये एपिसोड जूदेव और जोगी कांड को देखते हुए सिर्फ यही कहा जा सकता है कि अगले एपिसोड का इंतजार करें। तब तक के लिए एक छोटा-सा ब्रेक.. .। हो न हो, जब तक बिगुल का यह अंक आपके हाथों में पहुंचे, तब तक नया एपिसोड चालू हो गया हो।

जूदेव-जोगी काण्ड से तो सड़ी हुई व्यवस्था से बदबू का एक भभका ही उठा है। इस सड़ांध का फैलाव और उसकी गहराई की थाह पाना कोई मुश्किल नहीं है। पिछले एक महीने के अखबारों की सुर्खियों पर नजरें दौड़ाइये। 'स्टाम्प घोटाले में महाराष्ट्र के पुलिस प्रमुख धरे गये', 'जयललिता तांसी भूमि घोटाले मामले से बरी', 'घूसखोरी में सी.बी. आई. का एक आला अफसर धरा गया', 'ताज गलियारे मामले में अपनी गर्दन बचाने के लिए मायावती जोड़तोड़ में जुटीं', 'मुलायम सिंह यादव के मुख्य सचिव अखण्ड प्रताप सिंह का इस्तीफा'...। ये तो चंद सुर्खियां हैं जिनमें लुटेरी व्यवस्था के राजनीतिक पहरेदार और आला अफसरों के भ्रष्टाचार की कारस्तानियां हैं। ज्यादा दिन नहीं हुए जब एक जज महोदय भी इंसाफ का सौदा करते धरे गये थे। व्यवस्था की सड़ांध मापने के लिए ये सुर्खियां ही काफी हैं। लेकिन ये तो महज आर्थिक अपराधों के किस्से हैं। हत्या, बलात्कार, अपहरण जैसे फौजदारी मामलों में शामिल नेताओं और अफसरों की फेहरिस्त भी इतनी लम्बी है कि गिनना आसान नहीं। कहने का मतलब यह है कि देश की पूंजीवादी व्यवस्था के सभी पहरेदार, अहलकार, सिपहसालार भ्रष्टाचार के मैला-कुण्ड में गहरे तक धंसे हुए हैं। इसकी बदबू आज चारों ओर इस हद तक फैल चुकी है कि कन्नौज के इत्र और पेरिस के सेण्ट से भी दबाने लायक नहीं रह गयी है।

देश की पूंजीवादी राजनीति और समाज के जीवन में व्याप्त इस भ्रष्टाचार पर तमाम भले और भोले कलमनवीस बेहद फिक्रमंद हैं। समाज और सार्वजनिक जीवन में नैतिकता के पतन पर राष्ट्रीय कहे जाने वाले अखबारों के पन्नों पर काफी रोशनाई भी बहाई जा रही है। तरह-तरह के सुझाव और तरकीबें भी सुझायी जा रही हैं। लेकिन ये तमाम महानुभाव लक्षणों को ही बीमारी मानकर उसके इलाज के नुस्खे सुझा रहे हैं। ये नुस्खे ऐसे ही हैं जैसे मैला टंकी की सफाई करने के बजाय उस पर ढक्कन लगाकर बदबू को रोकने की कोशिश करना। कोई चुनाव सुधारों की बात कर रहा है, कोई अफसरशाही पर अंकुश लगाने के कायदे सुझा रहा है तो कोई जजों के लिए आचार-संहिता बनाने की राय दे रहा है। जितने मुंह उतनी बातें। लेकिन कोई यह सवाल तक नहीं उठा रहा है कि क्या महज कठोर कानून बना देने और इन कानूनों के कारगर अमल की गारण्टी कर लेने से इन भ्रष्टाचारों पर काबू पा लिया जायेगा। सभी सुझावदाता सिर्फ उन्हीं आर्थिक-सामाजिक अपराधों की रोकथाम के उपाय बता रहे हैं जिन्हें आज तक लागू कानून की किताबों में अपराध माना जाता है। लेकिन हमारे सोचने का सबसे बुनियादी सवाल तो यह होना चाहिए कि क्या उस पूंजीवादी व्यवस्था का मौजूद होना ही अपने आप में सबसे बड़ा अपराध नहीं है जिसका वजूद ही मेहनतकश जनता की बेलगाम लूट पर टिका है।

इस सबसे बुनियादी सवाल पर गौर किये बिना भ्रष्टाचार पर तमाम पण्डिताऊ चर्चाएं निठल्ली बौद्धिक कवायदें या भ्रष्टाचार मिटाने की मासूम चाहतों से आगे नहीं बढ़ सकतीं। देश की मेहनतकश जनता की सबसे बड़ी लूट इन घपलों-घूसखोरियों के जरिये नहीं होती। यह तो सिर्फ गैरकानूनी (यानी जिन्हें देश का कानून लूट मानता है) लूट है। यह गैरकानूनी लूट तो उस कानूनी लूट के सामने तिनके बराबर भी नहीं है जिसे लूट माना ही नहीं जाता। यह लूट है पैदावार के साधनों पर निजी मिल्कियत के कानूनी हक की बुनियाद पर मुट्ठी भर देशी-विदेशी मुनाफाखोरों द्वारा उद्योगों, खेतीबारी और सेवा क्षेत्र में करोड़ों-करोड़ मेहनतकशों की मेहनत की लूट। हमारा संविधान-कानून इस लूट को न केवल मान्यता देता है बल्कि इसी लूट की मशीनरी की हिफाजत में विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका का ढांचा भी खड़ा किया गया है जिसे जनतंत्र के नाम पर हमारे ऊपर थोप दिया गया है।

भोजपुरी में एक कहावत मशहूर है कि चमड़े की टाटी की रखवाली कुत्ते से नहीं करवानी चाहिए। संसद-विधान सभाओं में बैठने वाले सांसदों-विधायकों का काम आखिर क्या है? यही न, कि मुनाफाखोरों की लूट के लिए खड़े किये गये ढांचे की रखवाली करना। फिर लूट के माल की चौकीदारी करने वाले से ईमानदारी, नैतिकता और सदाचार की कैसी उम्मीद? इस लुटेरी व्यवस्था में अफसरशाही का क्या काम है? लुटेरी नीतियों को लाठी-डंडे के जोर पर लागू करवाना—यानी धनपतियों की सेवा में मुस्तैदी से जुटे रहना। बदले में यह व्यवस्था तनख्वाहों और सुविधाओं के रूप में जो मोटी रकम देती है उससे ये 'जनप्रतिनिधि' और अफसर क्यों संतोष करें। जब जन की लूट की चौकीदारी करना ही इनका पेशा है तो 'जनसेवा' का पुरस्कार ये क्यों न लें भला? जब मालिकों को संतोष नहीं तो खिदमतगार 'संतोष परमं सुखं' का भजन क्यों गायें?

रही बात जजों की तो क्या ये देवदूतों के अवतार होते हैं? वे भी इसी समाज में जीते हैं। लुटेरी व्यवस्था के ढांचे-सांचे में ही वे भी पलते-बढ़ते हैं। फिर काजल की कोठरी से इन्हीं के बेदाग निकलने की उम्मीद क्यों पाली जाये? कहने का मतलब यह कि सार्वजनिक जीवन में फैले भ्रष्टाचार और समाज में नैतिकता की बहाली के लिए चिन्तित भले-भोले लोगों को छाती पीटने दीजिए। यह मेहनत की लूट को जायज मानने वाली पूंजीवादी नैतिकता की चीखपुकार है जिसे इस कानूनी लूट से वीरान हुई जिन्दगियों, करोड़ों-करोड़ लोगों की तबाही-बर्बादी, बेबस बचपन और मजबूर बुढ़ापे की पीड़ा नहीं सताती, पर जब व्यवस्था की सड़ांध से पैदा बदबू का भभका उठता है तो वह नाक दबाकर सुधारों के इत्र-फुलेल छिड़कने की सिफारिश देने लगती है। इस पूंजीवादी नैतिकतावादी और सदाचारी आत्माओं का मतिभ्रम दूर हो या न हो हमें इसकी परवाह किये बिना इस सड़ांध और उससे निकलने वाली बदबू को हमेशा के लिए दफन करने के लिए पूंजीवादी व्यवस्था को ही इतिहास की कचरा-पेटी के हवाले करना होगा। और यह होगा मेहनतकशों की क्रान्तिकारी एकजुटता के लोहे के झाड़ू से। हमें इसीकी की तैयारी को आगे बढ़ाते रहना है। ●

लाल पताकाधारी नक्कालों से सावधान!

सामाजिक जनवादियों की घटिया, घिनौनी राजनीति और लाल कलगी वाले इनके मुर्गों की आपसी लड़ाई ने पिछले दिनों पश्चिम बंगाल में 21 मजदूरों की जान ले ली। रोंगटे खड़े कर देने वाली यह जलपाईगुड़ी जिले के दलगांव चायबागान में हुई जहां के मजदूर संगठन पर सीपीएम की पुछल्ली 'सीटू' की मनमानी चलती है।

यहां के सीटू नेता तारकेश्वर लोहार की गुंडई और दादागिरी से पहले ही मजदूरों में आक्रोश था। समय-समय पर सीटू का ही दूसरा गुट इसे हवा देता रहता था। इसी बीच तारकेश्वर लोहार द्वारा क्लर्क के तीन पदों पर पैसा लेकर अपने आदमियों को भर्ती करा देने में आग में घी का काम किया। पांच नवम्बर को इन दोनों गुटों की आपसी लड़ाई में लोहार गुट की तरफ से गोली के जवाब में दूसरे गुट द्वारा लोहार के घर में लगाई आग ने 21 मजदूर जिन्दा जल गये। तारकेश्वर लोहार सही-सलामत भाग गया।

दिल को दहला देने वाली यह घटना कोई अपवाद नहीं है और खतरनाक बात यह है कि एक नहीं वरन हजारों तारकेश्वर लोहार ट्रेड यूनियन आंदोलन में अमरबेल की तरह फैले हुए हैं। शोचनीय स्थिति यह है कि इस अमरबेल को सींचते नकली कम्युनिस्ट बेहयाई के साथ मजदूर हितों के ठेकेदार बने फिर रहे हैं। मार्क्सवाद की माला जपते ये नकली लड़ाके दरअसल मार्क्सवाद के बुनियादी उसूलों को त्याग चुके हैं। मजदूर वर्ग के स्वयंभू रहनुमा बने मार्क्सवाद के इन गद्दारों का मजदूर वर्ग की पीठ में छुरा भोंकने का लम्बा इतिहास रहा है। पर आज तो संसदीय वामपंथी पूंजीवाद की सेवा में किसी भी बुर्जुआ चुनावबाज से पीछे नहीं हैं। लोकलाज छोड़कर ये चुनावबाज वामपंथी खुल्लमखुल्ला मजदूर विरोधी मुनाफाखोर नीतियों के समर्थक बने हुए हैं।

अभी 19 नवम्बर को सीटू के राज्य स्तरीय सम्मेलन में ज्योति बसु ने मजदूरों को सलाह दी कि वह बदली हुई स्थितियों में अपनी रणनीति को बदले और उत्पादकता पर ध्यान दें। इसी सम्मेलन में प. बंगाल के उद्योग मंत्री ने सीटू नेताओं को चेताया कि वह लड़ाकूपन को बर्दाश्त नहीं करेंगे। स्पष्ट है कि ये दोनों ही दिग्गज नहीं चाहते कि पूंजी के राक्षस को खुश रखने के लिए संसदीय वामपंथ द्वारा किये जा रहे यज्ञ में मजदूर वर्ग कोई विघ्न डाले। चुनावी गोटियां लाल कर लाल किले पर लाल झंडा फहराने का दम भरने वाले चुनावी वामपंथियों की मुश्किल यह है कि पूंजीवाद की सेवा करते हुए उनका लाल नकाब बार-बार चेहरे से उतर जा रहा है। ट्रेड यूनियनों में जगह-जगह दलाली करते इनके पिछलग्गुओं का खुद ही भंडाफोड़ हो जा रहा है। साम्राज्यवाद-पूंजीवाद विरोधी किसी भी संघर्ष में इनकी गद्दारी जनता से छिपी नहीं रह पा रही है। केन्द्र समेत जहां इनकी सरकारें नहीं हैं वहां ये मजदूर विरोधी आर्थिक नीतियों का संसद-विधानसभा में विरोध करने के लिए जुबानी जमाखर्च करते रहते हैं। लेकिन प. बंगाल में नई आर्थिक नीतियों को लागू करने में ये किसी भी बुर्जुआ पार्टी से पीछे नहीं हैं।

प. बंगाल में मजदूरों-मेहनतकशों तबाही-बर्बादी की दास्तान किसी भी दूसरे राज्य से कम दर्दनाक नहीं हैं। आम जनता के प्रति सरकार की जिम्मेदारी का आलम यह है कि पिछले दिनों गरीब जनता के लिए स्वार्थ सेवाओं की पोल खोलने पर मुख्यमंत्री ने अस्पतालों में समाचार जुटाने पर ही रोक लगा दी। खबरों के अनुसार स्वास्थ्य सेवाओं का बुनियादी ढांचा चरमरा गया है। सरकारी अस्पतालों में नवजात बच्चों को आवारा कुत्ते और बिल्लियां काट लेते हैं। इलाज के अभाव में गरीब लोग अस्पताल के बरामदों में छटपटाते रहते हैं। एक गर्भवती स्त्री अस्पताल के बाहर दस घण्टे तक तड़पती रही और वहीं दम तोड़ दिया। यह मानवीय चेहरा है समाजवाद का गढ़ कहे जाने वाले प. बंगाल की सरकारी स्वास्थ्य सेवाओं का।

नागरिक अधिकारों के हनन की और क्रान्तिकारी ताकतों के दमन की खबरें भी प. बंगाल में आम हो चली हैं। गरीब मेहनतकशों, मजदूरों का मुनाफाखोरों द्वारा शोषण-उत्पीड़न, संघर्ष की राह पकड़ने पर पुलिसिया दमन और लम्पट राजनीतिक गुण्डागर्दी प. बंगाल में किसी भी अन्य राज्य से कम नहीं है। लोग अब यह समझने लगे हैं कि ये चुनावी तोते मजदूर वर्ग के सच्चे अग्रदूत नहीं हो सकते।

हालांकि नकली कम्युनिस्ट यह नहीं चाहते कि उनका भंडाफोड़ हो लेकिन इतिहास भी किसी के इच्छा से

(पेज 9 पर जारी)

विकल्पहीनता का चुनाव...

(पेज 1 से आगे)

को आरक्षण देकर चुनावी समीकरणों को अपने पक्ष में झुकाने की रणनीति अशोक गहलोत पर उलटवार साबित हो गयी और नाराज जाट आबादी का निर्णायक वोट आखिरी वक्त में भाजपा की झोली में जा गिरा। छत्तीसगढ़ के 'गरीब के लड़का' अजीत जोगी की नौटंकी आदिवासी आबादी तक को न लुभा सकी। उनकी अफसरी कार्यशैली और बड़बोलेपन ने मतदाताओं को इतना बिदका दिया कि रिश्वत लेते कैमरे की आंखों के सामने रंगे हाथों पकड़े गये दिलीप सिंह जूदेव से मतदाता उतनी नफरत नहीं कर सके जितनी जोगी की नौटंकी से। यहां तक कि अपनी ही पार्टी के पड़ोसी मुख्यमंत्री को ठेंगा दिखाते हुए 'विकास' की भागीरथी छत्तीसगढ़ में ही उतार लाने के नतीजों से भी मतदाताओं ने आंखें फेर लीं। नतीजों का यह चुनावी विश्लेषण हमारा नहीं टीवी चैनलों पर छाये धुरन्धर विश्लेषकों का है। ये विश्लेषण क्या उजागर करते हैं? यही न, कि किस तरह कांग्रेसियों के चुनावी समीकरणों के ऊपर संघ परिवार का चुनावी गणित और कुशल चुनाव प्रबंधन भारी पड़ा और सत्ता कांग्रेस के हाथों से फिसल गयी। तीनों ही राज्यों में मंहगाई, बेरोजगारी, निजीकरण, छंटनी-तालाबंदी और आम जनता की बढ़ती तबाही चुनावी मुद्दे नहीं बने। जबकि जनता के बुनियादी मुद्दे आज यही हैं। अकेले इस तथ्य से भी अपने आप जाहिर हो जाता है कि मध्यप्रदेश में भाजपा बिजली-पानी-सड़क जैसे मुद्दों को उछालकर चुनावी लाभ बटोरने में कामयाब रही। जब वोट पड़े हैं जातिवादी समीकरणों को आधार बनाकर, जज्बात उभाड़कर, पानी की तरह पैसा बहाकर, तो इससे संसदीय लोकतंत्र की महानता कहां से साबित होती है? साबित तो यह बात होती है कि देश का संसदीय लोकतंत्र पिछले छप्पन सालों में पतित होकर वहां पहुंच चुका है कि नाम के लिए ही सही, जनता के बुनियादी मुद्दों को कोई भी चुनावी पार्टी चुनावी मुद्दा बनाने का माद्दा नहीं रखती, इस डर से कि इन मुद्दों की आंधी में कहीं संसदीय लोकतंत्र के ही परखचे न उड़ जायें। जब संसदीय लोकतंत्र की जड़ें इतनी खोखली हो चुकी हों तो फिर काहे की महानता। लेकिन अगर तुच्छता को महानता का दर्जा नहीं दिया जायेगा तो हमारे इन चुनाव विश्लेषकों की रोजी-रोटी (या धंधा-पानी) कैसे चलेगा?

पिछले तमाम चुनावों की तरह इस बार भी औसतन पचास फीसदी से अधिक लोग अपना वोट डालने घरों से निकले ही नहीं। यानी आधे मतदाताओं ने संसदीय लोकतंत्र के इस तमाशे को पूरी तरह खारिज कर दिया। जिन लोगों ने वोट डाले भी उन्होंने इस उम्मीद में प्रत्याशियों को नहीं चुना कि वे सत्ता में पहुंचकर उनकी किस्मत संवार देंगे या देश और समाज को तरक्की की राह पर ले चलेंगे। यह उम्मीद तो वे कब की छोड़ चुके हैं। उनको एक तरफ कुआं दूसरी तरफ खाई के बीच चुनाव करना था। कोई अपनी जाति वाले को जिताने पहुंचा तो कोई बाहुबलियों के डर से और कोई चंद सिक्कों के बदले अपना वोट बेचने पहुंचा। विकल्पहीनता और चेतना का पिछड़ापन, भय और बेबसी—ज्यादातर मामलों में यही कारक रहे मतदाताओं के वोट डालने के! कांग्रेसी कुशासन के खिलाफ गुस्सा भी नकारात्मक वोट के रूप में दूसरे मजबूरी के विकल्प के रूप में भाजपा की झोली में जा गिरा। उधर दिल्ली में वोट डालने निकले लोगों को भाजपा के बूढ़े घोड़े मदन लाल खुराना का विकल्प जंचा नहीं। इससे भी जाहिर होता है कि बाकी तीन राज्यों में लोगों ने भाजपा की नीतियों पर सकारात्मक वोट नहीं डाले। ऐसा होना आश्चर्यजनक भी नहीं है। जब कोई क्रान्तिकारी विकल्प नजर नहीं आ रहा हो, तो लोगों की यह सोच बन जाया करती है कि चलो अपनी जाति-धर्म या क्षेत्र वाले को ही वोट डाल दिया जाये। यह दो बुराइयों में से बारी-बारी किसी एक को चुनने की मजबूरी है जो लोगों की बदलाव की चाहत को ही दिखाती है। विकल्पहीनता में पैदा हुई यह आम लोगों के भीतर गहरे तक पैठी निराशा ही है जो उन्हें इस या उस पार्टी के खाते में वोट डालने को मजबूर करती है। अगर यही भारतीय लोकतंत्र की महानता है तो फिर क्या कहने! वाह, वाह, भारतीय लोकतंत्र, तेरी महिमा अपरम्पार है!

बहरहाल, अगर इन चुनावों का गहराई से विश्लेषण किया जाये तो देश में क्रान्तिकारी बदलाव के लिए सक्रिय ताकतों को आने वाले दिनों के लिए कुछ संकेत साफ नजर आ सकते हैं। भाजपा चारों राज्यों के चुनावों में इस बार हिन्दुत्व के एजेण्डे को पीछे रखने के लिए मजबूर हुई। हालांकि शुरू में इस मुद्दे को लहकाने की कोशिशें भरपूर हुईं लेकिन मामला जोर न पकड़ता देख संघ परिवार के रणनीतिकारों ने पैंतरापलट कर 'विकास और सुशासन' के मुद्दे को उछालना शुरू किया जिसने चुनावी समीकरणों के साथ मिलकर भाजपा को बोनस वोट दिलवाये। इससे क्या जाहिर होता है? यही कि आम जनता के लिए रोजी-रोटी और जिन्दगी से जुड़े दूसरे बुनियादी सवाल हमेशा अहम रहे हैं। धर्मान्धता का जुनून भड़काकर और खून की बारिश में एकाध चुनावों की फसल काटी जा सकती है पर इनके सहारे हमेशा सत्ता तक नहीं पहुंचा जा सकता। यह अपने आप में जनता के भीतर बढ़ती बेचैनी और विकल्प की छटपटाहट को दर्शाता है। यह इस बात की ओर साफ इशारा है कि क्रान्तिकारी बदलाव की ताकतों को आम मेहनतकश जनता के बीच क्रान्तिकारी विकल्प का ठोस खाका और ठोस नारे लेकर जाने की जरूरत है और अमली जमीनी कार्रवाइयों को तेज कर देने की जरूरत है।

अगर 1947 के बाद के चुनावी राजनीति के इतिहास पर ही गौर किया जाये तो यह बात साफ उभरकर आती है कि आम लोगों के भीतर की यह बेचैनी बार-बार उभरकर सतह पर आयी है और क्रान्तिकारी विकल्प की गैर मौजूदगी में इसका लाभ किसी न किसी चुनावी पार्टी ने झटक लिया है। ताजा चुनावी नतीजों से भी विकल्प की यही बेचैनी उभरकर सामने आयी है। यह आगे और तीखेपन के साथ उभरेगी। लेकिन अगर इस स्थिति के संकेतों की अनदेखी हुए क्रान्तिकारी ताकतों ने कारगर ढंग से हस्तक्षेप करने में आगे भी अपनी नाकामी जाहिर की तो फिर अवाम इसी तरह नागनाथों और सांपनाथों से बारी-बारी डंसवाती रहेगी।

इन चुनावों में हिन्दुत्व के एजेण्डे को पीछे रखकर 'विकास और सुशासन' जैसे मुद्दों पर चुनाव लड़ने की भाजपायी रणनीति से कुछ बुर्जुआ कलमघसीट यह कयास लगा रहे हैं कि कहीं भाजपा धुर दक्षिणपंथी पार्टी का चोला उतारकर कांग्रेस जैसी 'मध्यमार्गी' पार्टी के रूप में नया अवतार लेने तो नहीं जा रही है। इन राजनीतिक विश्लेषकों की यह अटकलपच्ची नखलिस्तान में पानी का ख्वाब देखने जैसा है। ये मासूम विश्लेषक संघ परिवार के रणनीतिकारों के बारे में कितने मुगालते में हैं! मौके की नजाकत ताड़ते हुए चोला बदलने में ये संघी विचारक कितने माहिर हैं इसके नमूने पिछले दो दशकों की चुनावी राजनीति में इतनी बार उजागर हुए हैं कि उन्हें गिनना भी मुश्किल है। दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद से लेकर गांधीवादी समाजवाद और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद तक के वैचारिक शीर्षासन की बात हो या चुनावी माहौल को भांपकर मुद्दे उछालने की कलाबाजी हो, संघ परिवार के राजनीतिक मुखौटे भाजपा ने अन्य सभी चुनावी पार्टियों को पीछे छोड़ दिया है। दरअसल, बात यह है कि संघ परिवार आज चुनावी राजनीति में इतना माहिर हो चुका है कि वह अपने सभी विकल्पों का खुला रखना चाहता है। वह जरूरत के मुताबिक वाजपेयी के उदारवादी मुखौटे को भी इस्तेमाल करना चाहता है और आडवाणी के अनुदारवादी मुख को भी। आक्रामक हिन्दुत्ववादी ब्रिगेड के सिंघल और तोगड़िया जैसों को वह कभी आगे कर देता है तो कभी पीछे। कभी राममंदिर तो कभी 'विकास और सुशासन'—ये सभी उसकी चुनावी भंगिमाएं हैं। उसकी झोली में हर तरह का माल है, जब जैसा मौका देखा भिड़ा दिया। इसलिए किसी गफलत में पड़ने की जरूरत नहीं। साम्प्रदायिक फासीवाद की राजनीति संघ परिवार की वैचारिक धुरी है, बाकी सभी भंगिमाएं उसकी इस धुरी को मजबूत बनाने के लिए हैं। इस धुरी को छोड़कर वह अपना वजूद भला क्यों मिटायेगी?

गुजरात के बाद मध्यप्रदेश, राजस्थान और छत्तीसगढ़ अगले पांच वर्षों तक हिन्दुत्व की नयी प्रयोगशालाएं बनेंगे। सत्ता पर कब्जा जमाने के बाद अब इन राज्यों में समाज के समूचे ताने-बाने को खतरनाक साम्प्रदायिक फासीवादी रंग में रंगने का काम संघ परिवार के एजेण्डे में सबसे ऊपर रहेगा। निजीकरण-उदारीकरण की रेल और मेहनतकश अवाम को बांटने-कुचलने का खेल अब धड़ल्ले से आगे बढ़ेगा। इस बारे में कोई भ्रम नहीं रहना चाहिए।

लेकिन सच्चाई का एक दूसरा पहलू भी है जिस पर क्रान्तिकारी ताकतों को अपना ध्यान केन्द्रित करना होगा। साम्प्रदायिक फासीवाद का राक्षस पूंजीवादी व्यवस्था के जिन संकटों की कोख से जन्मा है वे ही संकट इस राक्षस के वध का कारण भी बनेंगे। इतिहास इसका गवाह है। आने वाले दिनों में जनता की तबाही-बर्बादी नये दौर में पहुंचेगी। खासकर अगले लोकसभा चुनावों के बाद। मेहनतकश जनता के दिलों में इकट्ठा होती जा रही व्यवस्था के खिलाफ नफरत की बारूद की ढेरी और बढ़ती जायेगी और बदलाव की बेचैनी भी। आने वाले दिनों में देश की राजनीति और समाज की तस्वीर बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करेगी कि क्रान्तिकारी ताकतें बारूद की इस ढेरी तक बदलाव की चिंगारी किस हद तक पहुंचा पाती हैं। ●

विशेष सामग्री

(तैंतीसवीं किस्त)

पार्टी की बुनियादी समझदारी

अध्याय -11

पार्टी के प्राथमिक संगठनों के जुझारू काम

एक क्रान्तिकारी पार्टी के बिना मजदूर वर्ग क्रान्ति को कतई अंजाम नहीं दे सकता। लेनिन ने इस बात को बार-बार जोर देकर कहा था। स्तालिन और माओ ने भी बराबर इस बात पर जोर दिया और बीसवीं सदी की सभी सफल सर्वहारा क्रान्तियों ने भी इसे सच साबित किया।

लेनिन ने सर्वहारा वर्ग की क्रान्तिकारी पार्टी के सांगठनिक उसूलों का निर्धारण किया और इसी फौलादी सांचे में बोल्शेविक पार्टी को ढाला। चीन की पार्टी भी बोल्शेविक पार्टी की ही उत्तराधिकारी थी। सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान, समाजवादी समाज में वर्ग-संघर्ष का संचालन करते हुए माओ के नेतृत्व में चीन की पार्टी ने अन्य युगान्तरकारी सैद्धान्तिक उपलब्धियों के साथ-साथ लेनिनवादी सांगठनिक सिद्धान्तों को भी और आगे विकसित किया।

सोवियत संघ और चीन में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना के लिए बुर्जुआ तत्वों ने सबसे पहले यही जरूरी समझा कि सर्वहारा वर्ग की पार्टी का चरित्र बदल दिया जाये। हमारे देश में भी क्रान्ति का रास्ता छोड़ संसदीय रास्ते पर चलने वाली नामधारी कम्युनिस्ट पार्टियां मौजूद हैं। भारतीय मजदूर क्रान्ति को सफल बनाने के लिए भारत में भी सर्वहारा वर्ग की एक सच्ची क्रान्तिकारी पार्टी खड़ी करने का काम सबसे ऊपर है।

इसके लिए बेहद जरूरी है कि मजदूर वर्ग यह जाने कि असली और नकली कम्युनिस्ट पार्टी में क्या फर्क होता है और एक क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट पार्टी कैसे खड़ी की जानी चाहिए।

इसी उद्देश्य से, फरवरी 2001 के अंक से हमने एक बेहद जरूरी किताब 'पार्टी की बुनियादी समझदारी' के अध्यायों का किस्तों में प्रकाशन शुरू किया है। यह किताब सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान पार्टी-कतारों और युवा पीढ़ी को शिक्षित करने के लिए तैयार की गई श्रृंखला की एक कड़ी थी। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की दसवीं कांग्रेस (1973) में पार्टी के गतिशील क्रान्तिकारी चरित्र को बनाये रखने के प्रश्न पर अहम सैद्धान्तिक चर्चा हुई थी, पार्टी का नया संविधान पारित किया गया था और संविधान पर एक महत्वपूर्ण रिपोर्ट प्रस्तुत की गई थी। इसी नई रोशनी में यह पुस्तक एक सम्पादकमण्डल द्वारा तैयार की गई थी। मार्च, 1974 में पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, शंघाई से इस पुस्तक के प्रथम संस्करण की 4,75,000 प्रतियां छपीं। यह पुस्तक पहले चीनी भाषा से फ्रांसीसी भाषा में अनूदित हुई और 1976 में प्रकाशित हुई। फिर नार्मन बेथ्यून इंस्टीट्यूट, टोरण्टो (कनाडा) ने इसका फ्रांसीसी से अंग्रेजी में अनुवाद कराया और 1976 में ही इसे प्रकाशित कर दिया। प्रस्तुत हिन्दी अनुवाद मूल पुस्तक के इसी अंग्रेजी संस्करण से किया गया है। —सम्पादक

पार्टी संविधान पार्टी के प्राथमिक संगठनों के मुख्य कामों को इस तरह से परिभाषित करता है :

1. ''मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा का अध्यवसायपूर्वक अध्ययन करने और संशोधनवाद की आलोचना करने में पार्टी सदस्यों और गैर-पार्टी सदस्यों की अगुआई करना।''

पार्टी सदस्यों और क्रान्तिकारी जनसमुदायों का मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा का अध्यवसायपूर्वक अध्ययन करने में नेतृत्व करना इस बात की गारण्टी करता है कि पार्टी के प्राथमिक संगठन मार्क्सवाद को लागू करना जारी रखेंगे न कि संशोधनवाद को। यह काम प्राथमिक संगठनों के विकास के लिए राजनीतिक दिशा को निर्धारित करता है और उनका सबसे बुनियादी जुझारू काम है।

अपने सभी कामों में, पार्टी के प्राथमिक संगठनों को इस काम को आगे रखना चाहिए और ऐसी टुकड़ियों के रूप में विकसित होने के लिए संघर्ष करना चाहिए जो मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा का अध्ययन करती हैं, इसे प्रचारित करती हैं, इसकी हिफाजत करती हैं और इसे लागू करती हैं। उन्हें पार्टी सदस्यों और क्रान्तिकारी जनसमुदायों के अध्ययन करने के निश्चय को ऊपर उठाना चाहिए, क्रान्ति के लिए अध्ययन करने के विचार को अपने मन में बिठा लेना चाहिए और मेहनत व लगन के साथ अध्ययन के जरिए समझने और आत्मसात करने के लिए संघर्ष करना चाहिए। उन्हें सिद्धान्त और व्यवहार का मेल करने वाली क्रान्तिकारी कार्य शैली को दृढ़तापूर्वक लागू करना चाहिए और हर समस्या पर विचार और उसका समाधान मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा की स्थिति, दृष्टिकोण और पद्धति से शुरू करते हुए करना चाहिए। नेतृत्वकारी निकायों के लिए तो यह और भी जरूरी है कि वे लगनपूर्वक, उद्यमशीलता के साथ और दूसरों से भी बेहतर तरीके से अध्ययन करें। उन्हें जनसमुदायों के सकारात्मक अनुभवों और अध्ययन की अच्छी पद्धतियों को एकत्र और प्रचारित करना चाहिए और अध्ययन आंदोलन को और गहरा बनाना चाहिए। उन्हें उन तत्वों को प्रशिक्षित और शिक्षित करना चाहिए जो क्रान्तिकारी कामों के मुख्य आधार हैं, इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि वे जनसमुदायों से घनिष्ठता से जुड़े हैं, सबको शामिल करना चाहिए और अध्ययन पर जोर देना चाहिए।

पार्टी के प्राथमिक संगठनों को पार्टी सदस्यों और क्रान्तिकारी जनसमुदायों का संशोधनवाद की आलोचना करने में नेतृत्व करना चाहिए। संशोधनवाद एक अंतर्राष्ट्रीय बुर्जुआ वैचारिक रुझान है और आज भी एक मुख्य खतरा है। इसलिए पार्टी संगठनों को बारम्बार और दृढ़तापूर्वक संशोधनवाद, बुर्जुआ विश्व दृष्टिकोण और शोषक वर्गों की विचारधाराओं की आलोचना करने के लिए क्रान्तिकारी जनांदोलन छेड़ने चाहिए। साथ ही, उन्हें अधिरचना में वर्ग संघर्ष पर भी करीबी से ध्यान देना चाहिए—संस्कृति के कई क्षेत्रों समेत। उन्हें मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा के अध्ययन और संशोधनवाद की आलोचना, दोनों को पार्टी को विकसित और सुदृढ़ बनाने के दीर्घकालिक काम के रूप में करना चाहिए।

2. ''विचारधारात्मक और राजनीतिक लाइन की बाबत पार्टी सदस्यों और गैर-पार्टी सदस्यों को लगातार शिक्षा देना और वर्ग शत्रु से दृढ़तापूर्वक लड़ने में उन्हें नेतृत्व देना।''

कम्युनिस्ट पार्टी सर्वहारा वर्ग की क्रान्तिकारी पार्टी है, बुर्जुआ वर्ग और सारे शोषक वर्गों के खिलाफ वर्ग संघर्ष चलाने में यह सर्वहारा वर्ग का औजार है। पार्टी के प्राथमिक संगठन पहली कतार की वे टुकड़ियां हैं जो वर्ग शत्रु के खिलाफ संघर्ष में पार्टी सदस्यों और क्रान्तिकारी जनसमुदायों का नेतृत्व करती हैं। लिहाजा उन्हें हर नई स्थिति में वर्ग संघर्ष और दो लाइनों के संघर्ष की नई अभिलाक्षणिक विशेषताओं का लगातार विश्लेषण और अध्ययन करना चाहिए, वर्ग संघर्ष और दो लाइनों के संघर्ष के महत्वपूर्ण प्रश्नों को अध्यवसायपूर्वक हाथ में लेना चाहिए और जनता पर भरोसा करना चाहिए और उसे वर्ग संघर्ष और दो लाइनों का संघर्ष चलाने के लिए लामबंद करना चाहिए। कुछ विशेष जगहों पर, पार्टी संगठन रोजमर्रा के कामों और मामूली मामलों में ही तल्लीन रहते हैं और अहम मसलों पर ध्यान नहीं देते; यह बेहद खतरनाक है। अगर ये संगठन अपने रास्ते ठीक नहीं करते, वे अवश्यंभावी रूप से संशोधनवाद के रास्ते पर चल पड़ेंगे।

पार्टी संगठनों को वर्ग संघर्ष और सर्वहारा की तानाशाही पर अध्यक्ष माओ का सिद्धान्त और समाजवाद के सम्पूर्ण ऐतिहासिक काल के लिए पार्टी की बुनियादी लाइन का सचेतन तौर पर अध्ययन करने में और समाजवादी समाज में वर्ग संघर्ष की अभिलाक्षणिक विशेषताओं और नियमों की गहरी समझदारी हासिल करने में, और ल्यू शाओ-ची, लिन पियाओ और उसी किस्म के दूसरे उचक्कों द्वारा फैलाये गये ''वर्ग संघर्ष की समाप्ति के सिद्धान्त'' की गहराई के साथ आलोचना करने में पार्टी सदस्यों और व्यापक क्रान्तिकारी जनसमुदायों का नेतृत्व करना चाहिए, ताकि वर्ग संघर्ष चलाने में जनसमुदायों को ज्यादा पहल दिखलाने के योग्य बनाया जा सके। संघर्ष चलाने में, उन्हें जनसमुदायों को कार्रवाई में खुला हाथ देते हुए उन्हें गोलबन्द करना चाहिए, जितना ज्यादा हो सके उतना अध्ययन और जांच-पड़ताल करनी चाहिए, दो भिन्न प्रकार के अंतरविरोधों के बीच स्पष्ट रूप से भेद कर पाने में योग्य होना चाहिए, हमारे और शत्रु के बीच संघर्ष को लेकर पार्टी की नीतियों को सही ढंग से लागू करना चाहिए, और मुट्ठी भर वर्ग शत्रुओं पर जोरदार, शुद्धता के साथ और बिना किसी दया के हमला बोलना चाहिए।

विचारधारात्मक और राजनीतिक शिक्षा मुहैया कराना हमारी पार्टी का विचारधारात्मक रूप से निर्मित करने में बुनियादी अहमियत रखता है। वर्ग संघर्ष और दो लाइनों के संघर्ष के दीर्घकालिक चरित्र के चलते, हमें लम्बे समय तक यह शिक्षा चलानी होगी। पार्टी संगठनों को पार्टी सदस्यों और क्रान्तिकारी जनसमुदायों को विचारधारा और राजनीति में शिक्षित करने के काम की जिम्मेदारी को अध्यक्ष माओ की शिक्षाओं के अनुरूप निभाना चाहिए। मार्क्सवादी-लेनिनवादी क्लासिकीय रचनाओं और अध्यक्ष माओ की रचनाओं को बुनियादी सामग्री के रूप में लेते हुए उन्हें पार्टी पाठ्यक्रमों के रूप में या अध्ययन समूह बनाकर जीवंत और प्रभावी शिक्षा मुहैया करानी चाहिए, और कारखाने, पड़ोस, परिवार, कम्पनी आदि के इतिहास को बताने जैसे तरीकों का इस्तेमाल लगातार दो लाइनों के बीच के संघर्ष के बाबत पार्टी सदस्यों और क्रान्तिकारी जनसमुदायों की चेतना को ऊपर उठाने, असली और नकली मार्क्सवाद में भेद कर पाने और अध्यक्ष माओ की क्रान्तिकारी लाइन के साथ खड़े होने और उसे सचेतन तौर पर लागू करने की उनकी क्षमता को बढ़ाने के लिए करना चाहिए।

3. ''पार्टी की नीतियों को प्रचारित और लागू करना, इसके निर्णयों को लागू करना और पार्टी तथा राज्य द्वारा सौंपी गई हर जिम्मेदारी को पूरा करना।''

हमारी पार्टी की सारी नीतियां सघन रूप में सर्वहारा वर्ग और सम्पूर्ण मेहनतकश आबादी के बुनियादी हितों की नुमाइन्दगी करती हैं। वे अध्यक्ष माओ की क्रान्तिकारी लाइन को साकार रूप देती हैं और वे जनता को एकजुट करने और शत्रु को पराजित करने के शक्तिशाली विचारधारात्मक हथियार हैं। अध्यक्ष माओ कहते हैं : **''नीति और कार्यनीति पार्टी का जीवन हैं।''** (माओ त्से-तुङ, **संकलित रचनाएं,** खण्ड - 4, स्थितियों पर एक परिपत्र'' पृ. - 220, अंग्रेजी संस्करण) पार्टी के प्राथमिक संगठन कौन सी नीति लागू कर रहे हैं यह तय करना कोई गैर-महत्वपूर्ण साधारण काम नहीं है, बल्कि, उल्टे, यह दिशा और लाइन से सम्बन्धित एक अहम मुद्दा है। केवल अध्यक्ष माओ की सभी सर्वहारा नीतियों को विवेकपूर्ण ढंग से लागू करके ही वे अच्छा काम कर सकते हैं और पार्टी और राज्य द्वारा सौंपी गई जिम्मेदारियों का सफलतापूर्वक निर्वाह कर सकते हैं। पार्टी के प्राथमिक संगठनों को पार्टी सदस्यों और क्रान्तिकारी जनसमुदायों के बीच पार्टी के राजनीतिक सिद्धान्तों का लगातार प्रचार करना चाहिए, ताकि जनसमुदाय उन्हें सही वक्त पर समझ सकें और पार्टी के राजनीतिक सिद्धान्तों को सचेतन कामों का रूप दे सकें। पार्टी की नीतियों को लागू करने में, प्राथमिक संगठनों को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि पार्टी की बुनियादी लाइन और आम राजनीतिक सिद्धान्तों के साथ ही अन्य मुद्दों पर विभिन्न विशिष्ट नीतियों के बीच सही सम्बन्ध कायम रहे। पार्टी की बुनियादी लाइन आम सिद्धान्तों और उनकी ठोस नीतियों को तय करती है और ताकि दोनों के बीच भेद हो सके और दो अलग तरह के अंतरविरोधों को सही ढंग से निपटाया जा सके। इस प्रकार, हमें पार्टी की बुनियादी लाइन को हमेशा दिमाग में रखना चाहिए ताकि इसकी विभिन्न विशिष्ट नीतियों की सच्ची भावना को सही ढंग से समझा जा सके। केवल इसी तरह से, हम इन नीतियों को लागू करने में दूरद्रष्टा हो सकते हैं, जन-समुदायों के तात्कालिक हितों को दीर्घकालिक हितों से, और अलग हिस्सों के हितों को सम्पूर्ण के हितों से जोड़ सकते हैं, उस रेखा को स्पष्टतः समझ सकते हैं जो शत्रु और हमारे बीच के अंतरविरोधों को जनता के बीच के अंतरविरोधों से अलग करती है और सभी मामलों में पार्टी की नीति के अनुसार काम कर सकते हैं। पार्टी की नीतियों को लागू करने—वर्ग संघर्ष और दो लाइनों के संघर्ष के क्षेत्र समेत—के लिए हमें बेहद चौकन्ना रहना चाहिए, सिद्धान्तों पर अटल रहना चाहिए, वर्ग शत्रुओं की तोड़-फोड़ की गतिविधियों को बेनकाब और तहस-नहस कर देना चाहिए। हमें दक्षिणपंथी और ''वामपंथी'' व्यवधानों का खात्मा कर देना चाहिए और उन सभी विचारों और कामों से मजबूती से संघर्ष करना चाहिए जो हमारी पार्टी की नीतियों के खिलाफ हैं। पार्टी के प्राथमिक संगठनों को दृढ़ता के साथ पार्टी के निर्णयों को लागू करना चाहिए। उन्हें पार्टी सदस्यों और क्रान्तिकारी जनसमुदायों को संगठित करना चाहिए ताकि वे पार्टी द्वारा निर्धारित विभिन्न लक्ष्यों को पूरा करने के लिए मेहनत के साथ काम करें और अपनी उपलब्धि को सुनिश्चित करें।

4. ''जनसमुदायों के साथ करीबी संबंध कायम रखना, उनकी रायों और मांगों को लगातार सुनना और एक सक्रिय विचारधारात्मक संघर्ष चलाना ताकि पार्टी जीवन को ओजस्वी बनाये रखा जा सके।''

जन समुदाय के सबसे करीबी होने के नाते, पार्टी के प्राथमिक संगठनों को उनसे करीबी संबंध कायम रखना चाहिए। उन्हें उसी हवा में सांस लेनी चाहिए, एक ही नियति का साझीदार होना चाहिए, उनके बीच पानी के बीच मछली, मांस में रक्त के समान होना चाहिए, और उनके बीच

(पेज 8 पर जारी)

तहलका कांड का जूदेव एपिसोड

"पैसा खुदा तो नहीं, लेकिन खुदा कसम, खुदा से कम भी नहीं!"

गोरखपुर। क्रान्तिकारी लोक स्वराज्य अभियान के तहत दिशा छात्र संगठन, नौजवान भारत सभा और नारी सभा की ओर से केन्द्रीय मंत्री दिलीप सिंह जूदेव द्वारा एक आस्ट्रेलियाई खनन कम्पनी से रिश्वत लेने और अपने को जायज ठहराने की निकृष्ट हरकत के खिलाफ भ्रष्टाचार विरोधी कार्टून पोस्टर प्रदर्शन किया गया, जिसे नगर के विभिन्न हिस्सों के नागरिकों का भारी समर्थन मिला।

उल्लेखनीय है कि 15 नवम्बर को एक वीडियो फिल्म में दिलीप सिंह जूदेव को घूस लेते दिखाया गया था। उसके बाद पहले आरोप से इंकार, फिर स्वीकार और अन्त में जूदेव ने यह कहा था कि हमने पैसा लिया तो क्या गलत किया। भ्रष्टाचार की इस घिनौनी हरकत के खिलाफ देश के विभिन्न हिस्सों में फूटे असन्तोष को मुखर स्वर देने के लिए यहां 'दिशा' की ओर से एक पर्चा भी निकाला गया है : तहलका कांड का जूदेव एपिसोड ''पैसा खुदा तो नही, लेकिन खुदा कसम, खुदा से कम नहीं!. प्रदर्शन के दौरान कार्यकर्ता इस पर्चे को भी सघन रूप से वितरित कर रहे थे। प्रदर्शन में एक विशालकाय पोस्टर एक लम्बे डण्डे के सहारे दो कार्यकर्ता लिये चला रहे थे जिस पर लिखा था : 'भ्रष्टाचार के इस नये कांड ने उड़ा दी है चादर, नंगा कर दिया है इस राजनीतिक-आर्थिक तंत्र को, निर्वस्त्र हो गयी है विद्रूप राक्षसी व्यवस्था, नंगे हो गये हैं उसके कुटिल घिनौने चौकीदार, पूंजीवाद से सदाचार की उम्मीद बेकार है, जिस व्यवस्था में हर वर्ष खरबों रुपये की सिर्फ कानूनी लूट होती है उसी में अरबों के घपले-घोटाले भी होते हैं।' इस पोस्टर में व्यंग्यात्मक किस्म के कुछ कार्टून भी बनाये गये थे जिसमें सभी घोटालेबाज राजनीतिज्ञ निर्वस्त्र थे और दूसरों से कह रहे थे कि 'तुम नंगे हो गये, अब कुर्सी छोड़ो', 'मैं तो अब नंगा हुआ हूं, तुम तो पहले से ही थे' आदि-आदि।

आजादी के बाद से अब तक हुए घोटालों की सूची भी इस पोस्टर में लगायी गयी थी, जिस पर लिखा गया था बोफोर्स, हवाला, चीनी, शेयर, अलकतरा, यूरिया, तहलका, स्टाम्प, ताबूत और तहलका कांड का जूदेव एपिसोड, अगले एपिसोड का इंतजार कीजिए। प्रदर्शन के दौरान नुक्कड़ सभाएं भी की जा रही थीं। वक्ताओं ने कहा कि दरअसल जूदेव कांड से तो इस भ्रष्ट व्यवस्था से बदबू का एक भभका ही उठा है, सड़न तो पहले से ही व्याप्त थी। आज यह व्यवस्था महंगाई, बेकारी, भूख, अशिक्षा और गरीबी को दूर कर पाने में नाकाम है औ खुद ही एक भ्रष्टाचार। यह भ्रष्ट व्यवस्था आम मेहनतकश जनता से भ्रष्ट-आचार करती है तथा ऊपर से आर्थिक भ्रष्टाचार की समस्या। कुल मिलाकर देश में फर्जी जनतंत्र कायम है, इसे अपनी एकता के दम पर गिराकर ही सच्चा जनतंत्र बनाया जा सकता है और जनता को भ्रष्टाचार व अन्य समस्याओं से निजात मिल सकती है।

प्रदर्शन के दौरान 'दिशा' के कार्यकर्ता भ्रष्टाचार विरोधी नारे भी लगाते चल रहे थे। जिधर से भी प्रदर्शनकारी कार्यकर्ता गुजर रहे थे, पोस्टर को देखने-पढ़ने के लिए लोगों की भीड़ लग जा रही थी। कार्टून देखने के लिए लोगों की विशेष उत्सुकता दिखायी दी।

जूदेव एपिसोड की यह गंदगी आते ही पांच राज्यों में सम्पन्न हुए विधानसभा चुनावों के फूहड़ स्वांग में वीभत्स, विद्रूप और हास्य रस से भरे नवीनतम दृश्य दिखने लगे हैं। सरेआम नंगा हो जाने के बाद कीचड़ में धंसी भाजपा ने कुछ छींटे कांगेस की तरफ भी उछाला है। शाश्वत घोटालेबाज कांग्रेस ने भी पलटवार करना शुरू कर दिया है जो पहले से ही नंगी थी। चुनावी सभाओं में 'तुम नंगे हो गये, तुम नंगे हो' का खेल खूब खेला गया। जबकि यह सच्चाई अब उजागर हो चुकी है कि फर्जी जनतंत्र के इस हम्माम में सभी चुनावी पार्टियां नंगी हैं।

इस प्रदर्शन के माध्यम से जनता में यह संदेश दिया गया कि इस भ्रष्ट राजनीतिक-सामाजिक व्यवस्था में सदाचार की उम्मीद करना व्यर्थ है। तमाम घोटालों के सिलसिले में तहलका के इस दिलीप सिंह जूदेव एपिसोड के बाद तो सिर्फ यही बयान किया जा सकता है कि भ्रष्टाचार के अगले एपिसोड का आम मेहनतकश जनता इंतजार करे या फिर इस संसदीय जनतंत्र को ही सिरे से खारिज कर क्रान्तिकारी लोक स्वराज्य की स्थापना के लिए कमर कस ले।

"जाति धर्म के झगड़े छोड़ो, सही लड़ाई से नाता जोड़ो"

गोरखपुर, दिशा छात्र संगठन, नौजवान भारत सभा और नारी सभा की ओर से नवम्बर के आखिरी हफ्ते में शहर में क्रान्तिकारी लोक स्वराज्य अभियान के तहत साम्प्रदायिकता के खिलाफ एक अनूठी किस्म की रैली निकाली गयी। 'जाति-धर्म के दानव को दफनाओ, लड़कर नया समाज बनाओ' शीर्षक से संचालित अभियान के कार्यकर्ता साम्प्रदायिकता के दानवरूपी पुतले की रास्ते भर झाड ुओं से पिटाई करते चल रहे थे।

अभियान के कार्यकर्ता 'साम्प्रदायिकता मुर्दाबाद', 'जाति-धर्म के झगड़े छोड़ो, सही लड़ाई से नाता जोड़ो, जब बनेगी जन एकजुटता, खत्म होगी साम्प्रदायिकता' जाति-धर्म का भूत भगाओ, लड़कर नया समाज बनाओ', जातिभेद के दानव को दफनाओ, समानता के सपनों को अपनाओ', 'दिमागी गुलामी की जंजीरें तोड़ो, सही लड़ाई से नाता जोड़ो' आदि नारे लगाते चल रहे थे और अभियान के सांप्रदायिकता के दानव को लोग झाड़ुओं से पिटाई करते चल रहे थे। बीच-बीच में जुलूस को रोककर नुक्कड़ सभायें भी की जा रही थीं।

नुक्कड़ सभाओं में वक्ताओं ने कहा कि धार्मिक कट्टरता, जातिभेद की संस्कृति और हर तरह की दिमागी गुलामी के खिलाफ जन एकजुटता को स्थापित करना आज की सबसे बड़ी जरूरत है। पूंजी की जो चौतरफा जकड़बंदी आज हमारा दम घोंट रही है, उसे तोड़ने के लिए जरूरी है कि तमाम परेशान-बदहाल मेहनतकश आम लोग एकजुट थे और यह तभी हो सकता है जब वे धार्मिक रूढ़ियों और जात-पांत के भेदभाव से अपने को मुक्त कर लें। शासक वर्गों के चाकर बौद्धिक और मुल्ला-पुरोहित हमें इनके जाल में फंसाकर मुट्ठीभर लुटेरों के राजपाट की हिफाजत करते हैं। धर्म और जाति का बंटवारा पूंजीवादी चुनावी राजनीति का एक आधार है।

साम्प्रदायिकता के खिलाफ इस रैली को रास्ते भर लोगों से भारी समर्थन मिला। राह चलते लोग, दुकानों पर खड़े नागरिक, स्कूली छात्र आदि इस रैली को देखने के लिए रुक जा रहे थे। हाल ही में अलीगढ़, वाराणसी और अहमदाबाद में फिर से भड़की साम्प्रदायिक हिंसाओं के खिलाफ 'दिशा' की ओर से निकाली गयी यह रैली शहर के सन्नाटे और निस्तब्धता से भरे अविश्वास व अज्ञात भय के इस माहौल में आम लोगों की संवेदनशील आत्माओं को झकझोरने वाली थी और इंसाफपसंद लोगों के सामने एक चुनौती थी।

जुलूस में साम्प्रदायिकता का एक दानव चल रहा था जिसका क्रूर एवं भयानक चेहरा, खून से सने दांत इसकी भयंकरता का अहसास करा रहे थे। आम जनता के दिलों में साम्प्रदायिकता, जातिभेद की नफरत की भावनाओं के प्रतीक और जनएकजुटता रूपी झाड़ू से इस दानव की पिटाई की जा रही थी। जुलूस के अंत में गोलघर में साम्प्रदायिकता के दानव रूपी पुतले को आम मेहनतकश और तरक्कीपसन्द जनता की एकता की जीत के प्रतीक के तौर पर गिरा दिया गया। कार्यक्रम के समापन के समय आसपास का माहौल काफी सरगर्म हो गया था और इन काली सामाजिक बुराइयों के खिलाफ आम लोग मुखर स्वर में अभियान के कार्यकर्ताओं से बातें कर रहे थे।

●

पार्टी की बुनियादी समझदारी...

(पेज 7 से आगे)

गहरी जड़ें बनानी चाहिए। उन्हें लगातार उनकी रायों और उनकी चाहतों को सुनना चाहिए और किसी समस्या के पैदा होने की सूरत में उनके साथ विचार-विमर्श करना चाहिए। किसी समस्या से हम जितना अधिक परिचित होंगे, कोई समस्या जितनी जल्दी समाधान की मांग करेगी, हमें जनसमुदायों की धारणाओं को उतना ज्यादा सुनना होगा। जिम्मेदारी जितनी भारी होगी और काम जितना ज्यादा होगा, हमें जनसमुदायों की रायों पर उतना ज्यादा ध्यान देना होगा। जितनी ज्यादा जीतें हम हासिल करेंगे, और जनसमुदायों की रायों पर उतना ज्यादा ध्यान देना होगा। जितनी ज्यादा जीतें हम हासिल करेंगे, और जनसमुदायों का जितना ज्यादा भरोसा हम हासिल करेंगे, हमें उन्हें उतना ज्यादा सुनना चाहिए।

अध्यक्ष माओ की शिक्षा **''कम्युनिस्ट पार्टी का दर्शन एक संघर्ष का दर्शन होता है''** (माओ त्से-तुङ, **पीकिङ रिव्यू,** न. 17, अप्रैल 24, 1970, पृ. 23, में उद्धृत), के अनुसार, पार्टी के प्राथमिक संगठनों को पार्टी के भीतर एक सक्रिय विचारधारात्मक संघर्ष चलाना चाहिए। उन्हें पार्टी के सांगठनिक और जनवादी जीवन का शुद्धीकरण करना चाहिए, आलोचना और आत्मालोचना को विवेकपूर्ण ढंग से व्यवहार में उतारना चाहिए। उन्हें पार्टी सदस्यों और क्रान्तिकारी जनसमुदायों को गोलबंद करना चाहिए और गलत रुझानों और सभी गैर-सर्वहारा विचारों के खिलाफ उनके संघर्ष में उनको समर्थन देना चाहिए। पार्टी के प्राथमिक संगठनों के काडरों को अपनी पहल पर जनसमुदायों की देखरेख के अंतर्गत आना चाहिए और विनम्रतापूर्वक उनकी आलोचना को सुनना चाहिए। अगर उनके अंदर कमियां हैं या वे गलतियां करते हैं, तो उन्हें पहचानना चाहिए और सही करना चाहिए। उन्हें स्व से संघर्ष करना चाहिए और जनसमुदाय के सामने संशोधनवाद का खण्डन करना चाहिए, न कि ''खुद को चहारदीवारी के भीतर सुधारना चाहिए'' और ''अपनी आत्मा में क्रान्ति चलानी चाहिए'' जिसकी वकालत ल्यू शाओ-ची और लिन पियाओ ने की है।

5. ''नए पार्टी सदस्यों को भरती करना, पार्टी अनुशासन को लागू करना और लगातार पार्टी संगठनों को मजबूत बनाना, बासी से छुटकारा पाकर तरोताजा कर लेना, ताकि पार्टी कतारों की शुद्धता को बरकरार रखा जा सके।''

तरोताजा की भर्ती के लिए बासी से छुटकारा पाने के दो पहलू हैं : एक विचारधारात्मक और एक सांगठनिक। विचारधारात्मक रूप से बासी से छुटकारा पाना और तरो-ताजा को शामिल करना पहले आता है लेकिन सांगठनिक पहलू भी बहुत महत्वपूर्ण है। यह पार्टी कतारों को विस्तारित करने और उनके उन्नत चरित्र और शुद्धता को बरकरार रखने की एक महत्वपूर्ण गारण्टी है। हमें पार्टी के भीतर के अंतरविरोधों के द्वंद्ववाद पर निर्भर रहते हुए लगातार विचारध ारात्मक और सांगठनिक दोनों ही क्षेत्रों में बासी से छुटकारा पाना होगा ओर ताजा को लेना होगा। हमें पार्टी में उन उन्नत तत्वों को अवश्य शामिल करना चाहिए जो तीन महान क्रान्तिकारी आंदोलनों के व्यवहार में आगे आते हैं और साबित गद्दारों, शत्रुओं के दलालों, सत्ता में मौजूद पूंजीवादी राह पकड़ने वाले पश्चाताप से बिल्कुल परे लोगों, विघटित और विजातीय वर्ग तत्वों का सफाया करते हैं। वे सभी व्यक्ति जिनके मामले शत्रु और हमारे बीच के अंतरविरोधों के गुणों को दर्शाते हैं और वैसे ही निपटाये जाते हैं, उन्हें निरपवाद रूप से पार्टी से निकाल दिया जाना चाहिए; वे लोग जिनके मामले हमारे और शत्रु के बीच के अंतरविरोध को दर्शाते हैं मगर जनता के बीच के अंतरविरोधों के रूप में निपटाये जाते हैं, सामान्य तौर पर उन्हें भी पार्टी से निकाल दिया जाना चाहिए ताकि पार्टी संगठनों की शुद्धता को कायम रखा जा सके। पार्टी के प्राथमिक संगठनों में, जैसा कि पार्टी के संविधान में बताया गया है, नियमित तौर पर चुनाव होने चाहिए; उन्हें बुजुर्ग, अधेड़ और नौजवान के ''एक-में-तीन'' संयोजन के सिद्धान्त को मानना चाहिए और नई शक्तियों को शामिल और मजबूत करना चाहिए। उन्हें सर्वहारा वर्ग के क्रान्तिकारी ध्येय के उत्तराधिकारियों की पांच जरूरतों के मद्देनजर सभी स्तरों पर पार्टी संगठनों के नेतृत्वकारी पदों के लिए कम्युनिस्ट पार्टी के शानदार सदस्यों को चुनने पर जोर देना चाहिए, ताकि पार्टी के लक्ष्य की सजीवता की गारण्टी की जा सके।

पार्टी को विकसित और मजबूत करने के लिए, हमें लगातार पार्टी सदस्यों की पार्टी अनुशासन को मानने की इच्छा को भी बढ़ाना चाहिए। पूरी पार्टी को एक एकीकृत अनुशासन के अंतर्गत करना ही वह सच्ची गारण्टी है कि पार्टी की केंद्रीकृत एकता को बचाया जा सकेगा और अध्यक्ष माओ की सर्वहारा क्रान्तिकारी लाइन को लागू किया जा सकेगा। क्रान्ति में पूर्ण विजय हासिल करने के लिए और सर्वहारा वर्ग की तानाशाही को मजबूत करने के लिए यह आवश्यकता जरूरी है। इसलिए पार्टी के प्राथमिक संगठनों को पूरी पार्टी को एक एकीकृत अनुशासन पर बांधने के महत्व को पूरी तरह समझना चाहिए, उन्हें सदस्यों को शिक्षित करना चाहिए ताकि अनुशासन की उनकी अवधारणा मजबूत हो और उसे सचेतन तौर पर लागू किया जा सके। जो सदस्य पार्टी अनुशासन का उल्लंघन करते हैं, उनके प्रति हमें पार्टी के संविधान के अनुसार उनके उल्लंघन की प्रकृति और दर्जे में फर्क समझना चाहिए, उनकी आलोचना करनी चाहिए और संजीदगी से उनकी मदद करनी चाहिए, और अगर जरूरत हो तो उचित अनुशासनात्मक कदम उठाना चाहिए ताकि पार्टी अनुशासन को आगे गंभीरता से लिया जाये।

संक्षेप में, पार्टी के प्राथमिक संगठनों को संविधान द्वारा रेखांकित सभी पांच मुख्य कामों को, एक के बाद एक, पूरा करने के लिए सक्रिय तौर पर काम करना चाहिए। केवल इसी रास्ते से वे अगली कतारों की लड़ाकू टुकड़ियों की अपनी भूमिका को निभा सकते हैं।

(जारी)

(अगले अंक में : **'पार्टी के प्राथमिक संगठनों को अपने सुदृढ़ीकरण को सुनिश्चित करना चाहिए'**)

इराक में जनप्रतिरोध से अमेरिकी हुक्मरानों में अफरा-तफरी

महाबली अमेरिकी इराक में जारी प्रतिरोध संघर्ष से किस कदर भयभीत है इसका पता समूची दुनिया को उस समय लगा जब राष्ट्रपति बुश ने चोरी-चुपके मुंहचोर की तरह अपने सैनिकों का 'मनोबल' बढ़ाने के लिए गत 28 नवम्बर को इराक की यात्रा की। पूरी दुनिया में अपनी चौधराहट जमाने वाले देश का राष्ट्रपति अपनी जान को लेकर इस हद तक भयभीत था कि यात्रा के दौरान विमान की बत्तियां बुझी हुई थीं। फिर भी तुर्रा यह था कि यात्रा अपने सैनिकों का मनोबल बढ़ाने के लिए की जा रही थी।

अपनी अर्थव्यवस्था के आंतरिक संकटों को हल करने और यूरोपीय संघ की अपनी प्रतिद्वंद्वी धुरी पर बढ़त बनाये रखने के लिए अमेरिका ने इराक पर कब्जा तो कर लिया लेकिन अब वहां जारी प्रतिरोध संघर्ष की विकटता से घबराकर वह वहां जैसे-जैसे कठपुतली सरकार बैठाकर भाग निकलना चाहता है ताकि दुनिया को मुंह दिखाने लायक बना रह सके। अमेरिका में इराक किस तरह की प्रतिनिधि सरकार की स्थापना करना चाहता है इसकी एक बानगी तो इराकी संचालक परिषद के रूप में पहले ही आ चुकी है। इस परिषद को वहां आम लोग हिकारत से 'सियारों की बारात' कहते हैं।

मंदी की मारी अमेरिकी अर्थव्यवस्था दीर्घकालिक ढांचागत संकट से जूझ रही है। उसका विदेश व्यापार घाटा सकल घरेलू उत्पाद के पांच फीसदी के बराबर है। अमेरिकी अर्थव्यवस्था भरभराकर गिर पड़ने से बची रहे इसके लिए जरूरी था कि दुनिया के सबसे बड़े व्यापार तेल व्यापार पर कब्जा बरकरार रहे। अमेरिकी डालर के विश्व वर्चस्व की वजह यह है कि वह वास्तव में अकेली रिजर्व मुद्रा है। अपनी तेल जरूरतों को पूरा करने के लिए हर देश को डालर आयात करने पड़ते हैं। वे अपने सामान और सेवाएं अमेरिका को बेचते हैं। और बदले में अमेरिका उन देशों को कुछ और डालर छाप कर दे देता है। यानी, अपने आयात के बदले में अमेरिका को वास्तव में कुछ नहीं देना पड़ता है। वहीं, दूसरी ओर तेल उत्पादक देशों के पास जमा डालरों का विपुल भण्डार अधिकांशतः अमेरिकी बैंकों में ही जमा होता है। यदि दुनिया के तेल व्यापार का आधा भी डालर के बजाय नई मुद्रा यूरो में होने लगे तो अमेरिकी चौधराहट को गंभीर खतरा उत्पन्न हो जायेगा।

दुनिया के कुल तेल भंडार के 16 प्रतिशत के मालिक इराक ने नवम्बर 2000 में तेल व्यापार के लिए डालर के बजाय यूरो को मुद्रा के रूप में अपना लिया था। इस पर अमेरिका को यह भय सताने लगा कि कल अगर ईरान और वेनेजुएला ने भी ऐसा ही किया तो डालर विश्व की इकलौती रिजर्व मुद्रा नहीं बना रह सकेगा और वह घाटे की अर्थव्यवस्था को टिकाये नहीं रह पायेगा। अब जबकि इराक पर अमेरिका का कब्जा हो गया है, वह वहां के तेल संसाधनों को अपने हाथ से जाने नहीं देना चाहता ताकि फ्रांस-जर्मनी की अपनी प्रतिद्वंद्वी धुरी पर बढ़त बनाये रखते हुए अपने विश्व वर्चस्व को बरकरार रखा जा सके। लेकिन अपने देश से प्यार करने वाली इराकी जनता कब्जाधारी फौजों की नींद हराम किये हुए है।

रमजान के महीने के दूसरे पखवाड़े में प्रतिरोध योद्धाओं ने इराक में अमेरिकी ठिकानों के खिलाफ जमकर हमला बोला। 22 नवम्बर को एक अंतरराष्ट्रीय कूरियर कम्पनी द्वारा संचालित एयर बस-300 को मिसाइल हमले के बाद आपात स्थिति में बगदाद अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे पर उतारना पड़ा। इस घटना के बाद बगदाद जाने वाली सभी नागरिक उड़ानें रद्द कर दी गई। अमेरिका विरोधी बगावत इराक के उत्तरी हिस्सों तक फैल चुकी है। शिया-सुन्नी और कुर्द आबादी के बीच के अंतरविरोध का फायदा उठाने के अमेरिकी मंसूबों पर पानी फिर गया है। 23 नवम्बर को मोसूल में नागरिकों की भीड़ ने दो अमेरिकी सैनिकों के टुकड़े-टुकड़े कर दिये और उनकी लाशों को सड़कों पर घसीटा गया। इसके एक दिन बाद शहर के निकट एक अमेरिकी सैन्य काफिले के करीब भयंकर विस्फोट हुआ। इसी दिन किरकुक शहर के करीब तेल पाइप लाइन को आग लगा दी गई। बगावती जनता की तोड़फोड़ की कार्रवाइयों के फलस्वरूप तेल-आपूर्ति वस्तुतः पंगु होकर रह गई है। नवम्बर के दूसरे हफ्ते में मोसुल में दो अपाचे हेलीकाप्टरों को मार गिराया गया, जिसमें 23 अमेरिकी सैनिक मारे गये।

इस बात के साफ संकेत मिल रहे हैं कि कब्जाधारी सेनाओं को बाहर खदेड़ने के लिए इराकियों ने भूमिगत रूप से व्यापक मोर्चे का निर्माण किया है। इराक की जमीनी सच्चाईयों के अनुरूप प्रतिरोध आंदोलन अपना आकार ग्रहण करता जा रहा है। प्रतिरोध संघर्ष शिया बहुल क्षेत्रों और उत्तर के कुर्दिश इलाकों तक पहुंच चुका है और इस तरह से सद्दाम विरोधी शिया आबादी और कुर्दों को अपने पक्ष में करने की अमेरिकी कोशिशें विफल साबित हुई हैं। अमेरिकी रक्षा विभाग के अधिकारियों ने इस बात की पुष्टि की है कि सुन्नी बहुल आबादी के बाहर इराक के सुदूरवर्ती क्षेत्रों में भी अमेरिकी सैनिकों पर हमलों की संख्या बढ़ती गई है।

इराकियों के दुर्द्धर्ष संघर्ष और कब्जाधारी सेनाओं के प्रति उनकी बेइंतहा नफरत ने अमेरिकी सैनिकों का जीना हराम कर दिया है और वे अपनी हताशा और कुंठा को निर्दोष नागरिकों को गोली मारकर जाहिर कर रहे हैं। इराकी जनता और सहायताकर्मियों का कहना है कि पहले गोली मारना और फिर सवाल पूछना अमेरिकी सैनिकों की आदत बन गई है। अपने कब्जे वाले देश में इस तरह से निर्दोष नागरिकों को हमले का निशाना बनाना समस्त स्वीकृत मानदंडों के खिलाफ और युद्ध अपराध है।

सैन्य विश्लेषकों का मानना है कि हमले के दायरे का विस्तृत होते जाना क्लासिकी गुरिल्ला अभियान का परिचायक है। इसके तहत प्रतिरोध संघर्ष के योद्धा शांतिपूर्ण समझे जाने क्षेत्रों को अस्थिर करते हुए युद्ध क्षेत्र का उत्तरोत्तर विस्तार करते जा रहे हैं।

कूटनीतिक मोर्चे की मुश्किलें बुश प्रशासन के सामने आने वाली कठिनाइयों का संकेत देती हैं। ज्यादातर पर्यवेक्षकों के मुताबिक बुश प्रशासन अंतर्राष्ट्रीय मंच पर कभी भी इतना अलग-अलग नहीं पड़ा था जितना कि इस समय वह पड़ गया है। सी.आई.ए. ने भी इराक में अब अमेरिका की मुंहकी खाने की आशंका जाहिर कर दी है।

इराक में संयुक्त राष्ट्र की भूमिका को लेकर मची खींचतान का नतीजा अब तक यही है कि बुश प्रशासन संयुक्त राष्ट्र से ऐसा प्रस्ताव पारित करवाने में अभी तक कामयाब नहीं हो सका है जिससे इराक के राजनीतिक और आर्थिक पुनर्निर्माण का नियंत्रण उसके हाथों में सौंपा जा सके। ऐसा बिल्कुल भी नहीं जान पड़ता कि उसका प्रतिद्वंद्वी यूरोपीय संघ बुश प्रशासन को उसके द्वारा खड़ी की गयी मानवीय और राजनीतिक समस्याओं से पिंड छुड़ाकर इराक से भाग खड़ा होने की अनुमति देगा। इराकी विद्रोहियों द्वारा 12 नवम्बर को इतालवी सैनिक ठिकाने पर किये गये आत्मघाती हमले ने इस बात की सम्भावना को आखिरी तौर पर खत्म कर दिया है कि इराक में लड़खड़ाती अमेरिकी फौजों की मदद के लिए कोई दूसरा देश वहां पर अपनी सेनाएं भेजेगा। हमले के 24 घंटे के भीतर जापान सरकार ने अपने शांति सैनिकों को इराक भेजने की योजनाओं को स्थगित करने की घोषणा कर दी। दक्षिण कोरिया ने भी और अधिक फौजें भेजने की अनिच्छा जाहिर की है। इटली, पोलैण्ड और दूसरे देशों में इस आशय की मांग जोर पकड़ने लगी है कि इराक में तैनात उनके सैनिकों को वापस बुलाया जाये।

इस बीच, पश्चिम एशिया और दूसरी जगहों के बहुत से टिप्पणीकारों ने इराक में अमेरिका की सैन्य पराजय को अवश्यंभावी बताया है। पर्यवेक्षकों को लगता है कि अमेरिका द्वारा खड़ी की गयी कोई भी नागरिक सरकार इराकी जनता का विश्वास नहीं हासिल कर पायेगी। इराक में भी उसका हश्र वही होगा जो कि 1970 के इराक में वियतनाम में हुआ था जब वहां से अमेरिकी सेनाओं को भाग खड़े होना पड़ा था।

ऐसा जान पड़ रहा है कि इराक में राजनीतिक प्रश्नों पर एक हद तक जन पहलकदमी की शुरुआत हो चुकी है। आम तौर पर देखा गया है कि आंदोलनों की शुरुआत प्रायः अराजकता से होती है और विचार बनने की प्रक्रिया संभ्रम से शुरू होती है। इसलिए वह दिन दूर नहीं जब समूचे मध्य-पूर्व की जनता अपने दुश्मन अमेरिकी साम्राज्यवाद और उसके देशी समर्थकों —बुर्जुआ शासकों—के विरुद्ध अपनी लड़ाई को धारदार बनाते हुए समाज परिवर्तन के विज्ञानसम्मत नियमों को अंगीकार करे।

— कामता प्रसाद

माओ त्से-तुङ के जन्मदिवस (26 दिसम्बर) के अवसर पर

कठमुल्लावाद और संशोधनवाद दोनों की आलोचना करो!

क्या लोग सत्य, शिव और सुन्दर के बारे में युगों से विचार-विमर्श नहीं करते रहे हैं? असत्य, अनिष्ट और असुन्दर इनके विपरीत हैं। बाद वालों के बिना पहले वालों का अस्तित्व नहीं हो सकता। सत्य असत्य के विरोध में खड़ा होता है। जैसे प्रकृति में, वैसे ही समाज में हर अस्तित्व अनिवार्यतः अपने विभिन्न हिस्सों में विभाजित हो जाता है, विभिन्न ठोस परिस्थितियों में केवल अन्तर्वस्तु और रूप में भिन्नता होती है। असत्य और असुन्दर परिघटनाएं हमेशा मौजूद रहेंगी। सही और गलत, अच्छा और बुरा, सुन्दर और असुन्दर जैसे विपरीत तत्व हमेशा रहेंगे। सुगंधित फूलों और जहरीले खर-पतवारों के बारे में भी यही बात लागू होती है। उनके बीच का सम्बन्ध विपरीत तत्वों के बीच की एकता और संघर्ष का सम्बन्ध है। विपरीतता के बिना विभेदीकरण नहीं हो सकता। विभेदीकरण और संघर्ष के बिना विकास नहीं हो सकता। असत्य के विरुद्ध अपने संघर्ष के जरिये ही सत्य विकसित होता है। मार्क्सवाद भी इसी तरह से विकसित होता है। मार्क्सवाद बुर्जुआ और निम्न-बुर्जुआ विचारधाराओं के विरुद्ध संघर्ष में विकसित होता है, और केवल संघर्ष के जरिये ही यह विकसित हो सकता है।

हम "खुला कर देने" की नीति के पक्ष में हैं, अब तक यह बहुत ज्यादा होने के बजाय बहुत कम है। हमें खुला कर देने से डरना नहीं चाहिये, न ही हमें आलोचना और जहरीले खर-पतवारों से डरना चाहिये। मार्क्सवाद वैज्ञानिक सत्य है; यह आलोचना से नहीं डरता और इसे आलोचना से परास्त नहीं किया जा सकता। यही बात कम्युनिस्ट पार्टी और जनता की सरकार के लिए भी लागू होती है। वे आलोचना से नहीं डरतीं और उन्हें इससे परास्त नहीं किया जा सकता। कुछ चीजें हमेशा रहेंगी जो गलत होंगी, और इसमें डरने की कोई बात नहीं है। हाल के दिनों में, अनेकों प्रेत और राक्षस मंच पर आ उपस्थित हुए हैं। यह देख कर, कुछ कामरेड बहुत चिन्तित हो गये हैं। मेरे विचार से, यदि थोड़ा-बहुत ऐसा है तो कोई खास बात नहीं है; कुछ वर्षों के भीतर ही ऐसे प्रेत और राक्षस मंच से एकदम गायब हो जायेंगे और आप चाहें भी तो उन्हें देख नहीं पायेंगे। हमें जो सही है उसे आगे बढ़ाना होगा और जो गलत है उसका विरोध करना होगा, लेकिन लोग यदि गलत चीजों के सम्पर्क में आते हैं तो हमें डरने की जरूरत नहीं है। बुरी और दुष्टतापूर्ण परिघटनाओं तथा त्रुटिपूर्ण विचारों के सम्पर्क में आने से लोगों को रोकने के लिए और मंच पर मौजूद प्रेतों और राक्षसों को देखने से उन्हें रोकने के लिए, महज कुछ प्रशासकीय आदेश जारी कर देने से कोई समस्या हल नहीं होगी। निश्चय ही, मैं ऐसी चीजों के प्रसार की वकालत नहीं कर रहा हूं, मैं सिर्फ यह कह रहा हूं कि "यदि उनमें से कुछ हैं तो कोई खास बात नहीं है।" यह जरा भी अजीब बात नहीं है कि दोषपूर्ण चीजें मौजूद रहनी चाहिये, न ही इनसे कोई भय पैदा होना चाहियेऋ बल्कि इससे लोग उनके विरु(बेहतर ढंग से संघर्ष करना सीखेंगे। यहां तक कि बड़े तूफानों से भी डरना नहीं चाहिये। बड़े तूफानों के बीच से गुजरकर ही मानव-इतिहास प्रगति करता है।

हमारे देश में बुर्जुआ और निम्न-बुर्जुआ विचारधारा, मार्क्सवाद-विरोधी विचारधारा एक लम्बे समय तक बनी रहेगी। बुनियादी तौर पर, समाजवादी व्यवस्था हमारे देश में स्थापित हो चुकी है। उत्पादन के साधनों के स्वामित्व के रूपान्तरण में हम बुनियादी जीतें हासिल कर चुके हैं, लेकिन राजनीतिक और विचारधारात्मक मोर्चों पर हमें अभी पूर्ण विजय प्राप्त नहीं हुई है। विचारधारात्मक क्षेत्र में, बुर्जुआ और सर्वहारा के बीच संघर्ष में कौन विजयी होगा, यह सवाल अभी वास्तव में तय नहीं हुआ है। बुर्जुआ और निम्न-बुर्जुआ विचारधारा के विरुद्ध एक दीर्घकालिक संघर्ष हमें अभी छेड़ना है। इसे नहीं समझना गलत होगा और विचारधारात्मक संघर्ष का परित्याग होगा। सभी गलत विचारों, सभी जहरीले खर-पतवारों, सभी प्रेतों और राक्षसों की आलोचना करनी होगी, किसी भी सूरत में उन्हें बेरोकटोक फैलने की इजाजत नहीं दी जा सकती। लेकिन आलोचना पूरी तरह तर्कपूर्ण, विश्लेषणात्मक और कायल करने वाली होनी चाहिये; तथा उद्धत, नौकरशाहाना, आधिभौतिक या कठमुल्ला नहीं होनी चाहिये।

इधर एक लम्बे समय से लोग कठमुल्लावाद की काफी आलोचना कर रहे हैं। ऐसा होना भी चाहिये। लेकिन वे संशोधनवाद की आलोचना करना अकसर छोड़ देते हैं। कठमुल्लावाद और संशोधनवाद, दोनों ही मार्क्सवाद के विपरीत काम करते हैं। मार्क्सवाद को निश्चय ही आगे बढ़ना होगा; इसे व्यवहार के विकास के साथ-साथ विकसित होना होगा। यह गतिहीन नहीं हो सकता। यदि यह प्रवाहहीन और रूढ़िबद्ध बना रहेगा तो निर्जीव हो जायेगा। लेकिन, मार्क्सवाद के बुनियादी उसूलों का उल्लंघन कभी नहीं किया जाना चाहिये, अन्यथा गलतियां होंगी। मार्क्सवाद को आधिभौतिक दृष्टिकोण से देखना और इसे कोई अपरिवर्तनीय-सी चीज समझना कठमुल्लावाद है। मार्क्सवाद के बुनियादी उसूलों को नकारना और इसके सार्वभौमिक सत्य को नकारना संशोधनवाद है। संशोधनवाद बुर्जुआ विचारधारा का एक रूप है। संशोधनवादी समाजवाद और पूंजीवाद के बीच के तथा सर्वहारा अधिनायकत्व और बुर्जुआ अधिनायकत्व के बीच के अन्तरों को नहीं मानते हैं। वे जिस चीज की वास्तव में वकालत करते हैं वह समाजवादी लाइन नहीं बल्कि पूंजीवादी लाइन होती है। वर्तमान परिस्थितियों में, संशोधनवाद कठमुल्लावाद की अपेक्षा अधिक घातक है। विचारधारात्मक मोर्चे पर हमारे वर्तमान महत्वपूर्ण कार्यभारों में से एक है, संशोधनवाद की आलोचना को विस्तार देना।

—माओ त्से-तुङ

(प्रचारकार्य पर चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के राष्ट्रीय सम्मेलन में भाषण)

कहानी

नंगा राजा

● येह शेङ ताओ

बहुत-से लोगों ने नये-नये कपड़े पहनने के शौकीन उस राजा के बारे में हैन्स एंडर्सन की कहानी पढ़ी होगी जिसे एक बार दो ठगों ने उल्लू बना दिया था। उन ठगों ने यह दावा किया कि वे राजा के लिए ऐसी सुन्दर पोशाक तैयार करेंगे जैसी कि कोई सपने में भी नहीं सोच सकता। पर सबसे बड़ी खूबी उसमें यह होगी कि वह पोशाक किसी मूर्ख व्यक्ति या अपने पद के लिए अयोग्य व्यक्ति को दिखायी नहीं देगी। राजा ने तुरन्त अपने लिए ऐसी पोशाक बनाने का आदेश दे दिया और ठग बुनने, काटने और सिलने का अभिनय करने में जुट गये। राजा ने कई बार अपने मंत्रियों को काम की रफ्तार देखने के लिए भेजा और हर बार उन्होंने उसे बताया कि वे अपनी आंखों से नये वस्त्रों को देखकर आ रहे हैं और वे वाकई बेहद खूबसूरत हैं। दरअसल, राजा के मंत्रियों ने कुछ भी नहीं देखा था, पर वे मूर्ख कहलाना नहीं चाहते थे और उससे भी बढ़कर अपने पदों के लिए अयोग्य घोषित किया जाना तो नहीं ही चाहते थे।

राजा ने तय किया कि जिस दिन नयी पोशाक तैयार हो जायेगी, उस दिन एक भव्य समारोह होगा और राजा नयी पोशाक पहनकर नगर में निकलेगा। राज्य भर में इसकी मुनादी करवा दी गयी।

जब वह दिन आया तो ठगों ने राजा के सारे कपड़े उतरवा दिये। फिर वे देर तक उसे नये परिधान में सजाने-धजाने का अभिनय करते रहे। राजा के दरबारियों और नौकर-चाकरों ने एक स्वर से उसकी तारीफों के पुल बांधने शुरू कर दिये क्योंकि वे नहीं चाहते थे कि वे मूर्ख कहलायें या अपने पदों के लिए अयोग्य घोषित कर दिये जायें। राजा ने संतुष्ट भाव से सिर हिलाया और नंग-धड़ंग बाहर चल पड़ा।

रास्ते के दोनों तरफ खड़े लोग भी मूर्ख कहलाना नहीं चाहते थे। वे सब के सब राजा की नयी पोशाक की इस तरह से प्रशंसा कर रहे थे जैसे वे उसे साफ-साफ देख रहे हों। लेकिन तभी एक बच्चा बड़ी मासूमियत से बोल पड़ा, ''अरे, उस आदमी ने तो कुछ पहना ही नहीं है!''

भीड़ के कानों में यह बात पड़ते ही चारों तरफ फैल गयी और जल्दी ही हर आदमी हंस रहा था और चिल्ला रहा था : ''अरे सच! राजा के बदन पर एक सूत भी नहीं है।'' अचानक राजा की समझ में आया कि उसे धोखा दिया गया है। लेकिन अब तो खेल शुरू हो चुका था और इसे बीच में रोकने का मतलब होता, और बेइज्जती। उसने तय किया कि वह इसे जारी रखेगा और सीना फुलाकर आगे चल दिया।

इसके बाद क्या हुआ? हैन्स एन्डर्सन ने इसके बारे में कुछ नहीं कहा है, लेकिन दरअसल इस कहानी में और भी बहुत कुछ हुआ था।

राजा अपने भव्य जुलूस के साथ आगे चलता रहा, मानो कुछ हुआ ही न हो। और वह इतना अकड़कर चल रहा था कि उसके कंधे और रीढ़ की हड्डी तक दुखने लगे। उसकी अदृश्य पोशाक के पिछले भाग को उठाकर चलने का अभिनय कर रहे सेवक बड़ी मुश्किल से अपने होंठ चबा-चबाकर हंसी रोक रहे थे क्योंकि वे मूर्ख कहलाना नहीं चाहते थे। अंगरक्षक अपनी निगाहें जमीन पर गड़ाये हुए चल रहे थे क्योंकि अगर किसी एक की भी नजर अपने साथी से मिल जाती तो उसके मुंह से जरूर हंसी फूट पड़ती।

लेकिन जनता तो ज्यादा स्पष्टवादी होती है। उसे अपने होंठ काटने और निगाहें जमीन पर गड़ाये रखने की कोई वजह समझ में नहीं आयी। इसलिए जब एक बार यह नंगी सच्चाई उजागर हो गयी कि राजा कुछ नहीं पहने हैं, तो वे जोर-जोर से ठहाके लगा कर हंसने लगे।

''अच्छा राजा है यह तो, नंग-धड़ंग चला जा रहा है,'' एक ने खिलखिलाते हुए कहा।

''जरूर इसकी अकल घास चरने चली गयी है,'' दूसरे ने कहकहा लगाया।

''थुलथुल, बदसूरत कीड़ा,'' किसी ने फब्ती कसी।

''उसके कंधे और टांगें देखो, जैसे पंख नुची हुई मुर्गी,'' चौथे आदमी ने ताना मारा।

इस फब्तियों से राजा का गुस्सा भड़क उठा। उसने जुलूस रोक दिया और अपने मंत्रियों को डपटा, ''सुना तुमने, इन मूर्खों और देश-द्रोहियों की जुबान बहुत चलने लगी है। तुम लोग रोकते क्यों नहीं उन्हें? मेरे नये वस्त्र बहुत ठाठदार हैं और इन्हें पहनने से मेरी राजसी आन-बान बढ़ती है। तुम लोग खुद यह बात कह रहे थे। आज से मैं सिर्फ यही कपड़े पहनूंगा और दूसरा कुछ नहीं पहनूंगा। जो कोई यह कहने की हिमाकत करता है कि मैं नंगा हूं, वह दुष्ट और गद्दार है। उसे फौरन गिरफ्तार करके मौत के घाट उतार दिया जाये। यह एक नया कानून है। इसकी घोषणा फौरन कर दी जाये।''

राजा के मंत्री तुरन्त भागदौड़ करने लगे। नगाड़े पीटकर प्रजा को इकट्ठा किया गया और मंत्रियों ने पूरी ताकत से चिल्ला-चिल्लाकर इस नये कानून की घोषणा कर दी। हंसना और फब्तियां कसना बन्द हो गया और राजा ने संतुष्ट होकर जुलूस को आगे बढ़ने का आदेश दिया।

लेकिन वह अभी थोड़ी ही दूर गया था कि ठहाकों और फब्तियों की आवाजें उसके कानों में पटाखों की तरह गूंजने लगीं।

''उसके बदन पर एक सूत भी नहीं है।''

''कैसा घिनौना पिलपिला बदन है।''

''उसकी तोंद देखो, जैसे सड़ा हुआ कद्दू।''

''उसके नये कपड़े वाकई कमाल के हैं!'' हर ताने के साथ जोरदार कहकहे लगते थे।

राजा फिर भड़क गया। उसने खा जाने वाली नजरों से मंत्रियों को घूरा और चिग्घाड़ा, ''इसे सुना तुमने!''

''हां महाराज, हमने सुना इसे,'' कांपते हुए मंत्रियों ने जवाब दिया।

''क्या तुम भूल गये अभी-अभी मैंने क्या नया कानून बनाया है?''

राजा की बात पूरी होने का इंतजार किये बिना मंत्रियों ने सिपाहियों को आदेश दिया कि उन सबको गिरफ्तार कर लायें जो हंस रहे थे या फब्तियां कस रहे थे।

चारों तरफ भगदड़ मच गयी। सिपाही इधर से उधर दौड़ने लगे और भागने की कोशिश कर रहे लोगों को अपने बल्लमों से रोकने लगे। बहुत से लोग गिर पड़े, कुछ दूसरों के ऊपर से छलांग लगाकर भागने में सफल हो गये। फब्तियों और हंसी की जगह चीखें और सिसकियां सुनाई पड़ने लगीं। करीब पचास लोग पकड़े गये और राजा ने उनको वहीं मार डालने का हुक्म दिया ताकि प्रजा समझ जाये कि उसके मुंह से निकली बात लौह कानून है और कोई उसका मजाक नहीं उड़ा सकता।

उस दिन के बाद से राजा ने कोई कपड़ा नहीं पहना। अन्तःपुर से लेकर दरबार तक, हर जगह वह नंगा ही जाता था और बीच-बीच में अपनी पोशाक की सिलवटें ठीक करने का अभिनय करता रहता था। उसकी रानियां और दरबारी शुरू-शुरू में उसे अपने बदसूरत पिलपिले शरीर के साथ घूमते और ऐसी हरकतें करते देखकर मजा लेते थे, पर धीरे-धीरे वे ऐसा दिखावा करना सीख गये जैसे कोई बात ही न हो। वे इसके आदी हो गये और अब वे राजा को ऐसे ही देखते थे जैसे वह पूरी तरह कपड़े पहने हुए हों। रानियां और दरबारीगण इसके सिवा कुछ कर भी नहीं सकते थे, अन्यथा वे अपने पदों से और यहां तक कि अपनी जान से भी हाथ धो बैठते। लेकिन इतनी जीतोड़ कोशिशों के बावजूद एक पल की गफलत भी उनके सर्वनाश का कारण बन सकती थी।

एक दिन राजा की प्रिय रानी उसे खुश करने के लिए अपने हाथों से सुरापान करा रही थी। उसने लाल शराब का एक प्याला भरकर राजा के होठों से लगाया और खूब मीठे स्वर में बोली, ''इसे पीजिए और ईश्वर करे कि आप हमेशा जीवित रहें।''

राजा इतना खुश हुआ कि उसने एक सांस में प्याला खाली कर दिया। लेकिन उसने शायद कुछ ज्यादा ही जल्दी कर दी क्योंकि उसे खांसी आ गयी और शराब उसकी छाती पर बह चली।

''अरे आपकी छाती पर धब्बा लग गया है।'' रानी बोल पड़ी।

''क्या, मेरी छाती पर!''

अपनी भूल का अनुभव करते ही राजा की प्रिय रानी का चेहरा पीला पड़ गया। ''नहीं, आपकी छाती पर नहीं, उसने कांपते हुए स्वर में अपनी भूल सुधारी, ''आपकी पोशाक पर धब्बा लग गया है।''

''तुमने कहा कि मेरी छाती पर धब्बा लग गया है। यह वही बात हुई कि मैं कुछ नहीं पहने हूं। बेवकूफ कहीं की! तू दगाबाज है और तूने मेरा कानून तोड़ा है!'' इतना कहने के साथ ही राजा चिल्लाया, 'ले जाओ इसे जल्लाद के पास।'' और उसके सिपाही रानी को घसीट ले गये।

राजा का एक बहुत विद्वान मंत्री था। राजा की सनक का शिकार हुआ। हालांकि उसने भी सब कुछ अनदेखा करने की आदत डाल ली थी, लेकिन उसे भरे दरबार में एक ऐसे आदमी को राजा कहने में शर्म आती थी, जो गद्दी पर बिल्कुल नंगा बैठता था। मन ही मन वह उसे 'गंजा बन्दर' कहता था। वह डरता था कि यदि किसी दिन उसके मुंह से असावधानीवश कोई बात निकल गयी या वह किसी गलत मौके पर हंस पड़ा तो उसकी बर्बादी निश्चित है। इसलिए उसने अपनी बूढ़ी मां को देखने, घर जाने के बहाने से राजा से छुट्टी मांगी।

राजा ने कहा कि, ''मैं किसी मातृभक्त बेटे की प्रार्थना भला कैसे ठुकरा सकता हूं। और उसे जाने की छुट्टी दे दी। मंत्री को उस समय ऐसा महसूस हो रहा था जैसे उसे मोटी-मोटी जंजीरों से मुक्ति मिल गयी हो। उसने राहत की सांस ली और उसके मुंह से धीरे से निकल गया, ''भगवान का लाख-लाख शुक्र है, अब मुझे उस नंगे राजा की ओर देखना नहीं पड़ेगा।''

राजा के कान में भनक पड़ी तो उसने अपने सेवकों से पूछा, ''क्या कहा उसने?'' सेवक हड़बड़ी में कोई बात बना नहीं पाये और उन्होंने उसे पूरी बात बता दी।

''अच्छा तो तुमने इसलिए छुट्टी मांगी थी क्योंकि तुम मुझे देखना बर्दाश्त नहीं कर सकते,'' राजा चिल्लाया। ''तुमने मेरा कानून तोड़ा है। अब देखो मैं ऐसा इंतजाम करता हूं कि तुम घर पहुंच ही न पाओ।'' इसके बाद उसने अपने जल्लादों को हुक्म दिया कि वे मंत्री को ले जायें और उसकी गर्दन उड़ा दें।

इन घटनाओं के बाद अन्तःपुर और दरबार में हर आदमी और ज्यादा चौकन्ना हो गया। लेकिन आम जनता ने तो रानियों और दरबारियों जैसी चालाकी नहीं सीखी थी। जब भी राजा लोगों के सामने आता था और वे उसके ढोंग को और उसके भद्दे शरीर को देखते थे, वे हंसी रोक नहीं पाते थे। इसके बाद खूनी हत्याओं का सिलसिला शुरू हो जाता था। एक दिन जब राजा मंदिर में यज्ञ करने के लिए गया तो उसके सिपाहियों ने तीन सौ लोगों को जल्लाद के हवाले किया। जिस दिन वह अपने सैनिकों का मुआयना करने निकला उस दिन पांच सौ लोग मौत के घाट उतारे गये, और एक दिन जब वह राज्य के शाही दौरे पर निकला तो राज्य भर में हजारों लोग मारे गये।

एक दयालु बूढ़े मंत्री ने सोचा कि राजा हद से बाहर जा रहा है और अब यह सब बन्द होना चाहिए। लेकिन राजा यह कभी नहीं मानता कि वह गलत है। उससे उसकी गलती बताना अपने गले में फंदा डालने के समान था। बूढ़े मंत्री ने सोचा कि अगर किसी तरह से राजा को फिर से कपड़े पहना दिये जायें तो जनता की हंसी और फब्तियां रुक जायेंगी और लोगों की जान बचेगी। कई रातों तक जाग-जागकर वह सोचता रहा कि क्या करे जिससे सांप भी मर जाये और लाठी भी न टूटे।

आखिर उसे एक योजना सूझी और वह राजा के पास गया। उसने कहा, ''मेरे मालिक! आपके एक वफादार सेवक के नाते मैं आपको एक सुझाव देना चाहता हूं। आप हमेशा नये-नये कपड़ों के शौकीन रहे हैं क्योंकि उनसे आपकी शानशौकत को चार चांद लग जाते हैं। लेकिन इधर बहुत दिनों से आप राज्य के मामलों में इतने व्यस्त रहे हैं कि आपको नये कपड़ों का ध्यान ही नहीं रहा है। जो पोशाक आपने पहनी हुई है, उसका रंग फीका पड़ रहा है। आप अपने दर्जियों को आदेश दीजिये कि वे आपके लिए एक नयी और शानदार पोशाक बनाकर तैयार करें।

''क्या कहा, मेरी पोशाक का रंग फीका पड़ रहा है?'' उसने अपने शरीर पर हाथ फिराते हुए कहा। ''बकवास! ये जादुई पोशाक है। इसका रंग कभी फीका नहीं पड़ सकता। तुमने सुना नहीं, मैंने कहा था कि अब मैं इसके सिवा और कुछ नहीं पहनूंगा। तुम चाहते हो कि मैं इसे उतार दूं, ताकि मैं भद्दा दिखूं! चलो, तुम्हारी उम्र और तुम्हारी पिछली सेवाओं का ख्याल करके तुम्हारी जान बख्श दे रहा हूं, लेकिन तुम्हारी बाकी जिन्दगी अब जेल में कटेगी।'8

सैकड़ों निर्दोषों को प्राणदण्ड देने का क्रम चलता रहा। उल्टे, लोगों की हंसी बन्द न होने से राजा एकदम तुनक गया और उसने और भीज्यादा कड़ा कानून बना दिया। इस बार उसने फरमान जारी कर दिया कि जब राजा सड़क पर निकले उस वक्त कहीं से किसी आदमी की किसी भी तरह की आवाज नहीं आनी चाहिए। अगर किसी ने कोई आवाज निकाली तो उसे हाथी से कुचलवा दिया जायेगा।

इस कानून की घोषणा के बाद राज्य भर के गणमान्य नागरिक सोचने लगे कि अब तो राजा अति कर रहा है। ठीक है कि राजा की हंसी उड़ाना अच्छी बात नहीं है, लेकिन दूसरी चीजों के बारे में बात करने पर क्यों प्राणदण्ड दिया जाये? वे सब जुलूस बनाकर राजा के यहां गये और राजमहल के बाहर घुटनों के बल झुककर बोले कि वे राजा को एक अर्जी देने आये हैं।

घबराया हुआ राजा बाहर आया और गरज कर बोला, ''तुम लोग यहां क्या करने आये हो? बगावत करना चाहते हो?''

गणमान्य नागरिकों ने अपने सर उठाने की जुर्रत किये बिना जल्दी से जवाब दिया, ''नहीं, नहीं महाराज, आप हमें गलत समझ बैठे हैं। हम ऐसा कुछ नहीं करने जा रहे हैं।'' राहत महसूस करते हुए राजा ने शान से अपनी अदृश्य पोशाक की सिलवटें ठीक की और पहले से भी ज्यादा कड़ी आवाज में बोला, ''फिर तुम लोग

(पेज 11 पर जारी)

देख फकीरे...

• मनबहकी लाल

देख फकीरे "लोकतंत्र" का फूहड़ नंगा नाच।

हाफ पैंटिए आदर्शों की पोल खुल गई आज
पैसे को ये खुदा बतावें, राम को आवे लाज।
एक के पीछे एक तहलका, जोगी पै गिर गई गाज
अफसर-नेता जपें तेलगी, बना कोढ़ में खाज।
चोर के पीछे चोर, मोर के पीछे भागे मोर
"मैं नंगा तो तू भी नंगा" सभी मचाते शोर।

नंगे सारे घूम रहे हैं घी में उंगली पांच
देख फकीरे "लोकतंत्र" का फूहड़ नंगा नाच।

संसद और विधानसभा में दल्लों की बारात
मंत्री-संत्री-तंत्री के घर नोटों की बरसात।
किसका गिरेबां किसने फाड़ा, किसका दामन चाक
पूंजी के किस टुकड़खोर का चेहरा लगता साफ?

यहां सत्य को झुलस रही है संविधान की आंच
देख फकीरे "लोकतंत्र" का फूहड़ नंगा नाच।

पूंजी के चाकर बतलाते सदाचार के माने
चुगा रहे हैं कातिल मंदिर में चिड़ियों को दाने।
हत्या और बलात्कार के अड्डे लगते थाने
हत्यारों की मजलिस में कविजी गाते हैं गाने।

मुठभेड़ों से आंख मूंद ले, पोथी-पतरा बांच
देख फकीरे "लोकतंत्र" का फूहड़ नंगा नाच।

नंगा राजा...

(पेज 10 से आगे)

इतनी भीड़ बनाकर यहां क्यों आये हो?"

"हम महाराज से प्रार्थना करने आये हैं कि हमारी हंसने-बोलने की आजादी लौटा दी जाये। जो आप पर कीचड़ उछालते हैं और हंसी उड़ाते हैं, वे दुष्ट लोग हैं और उनको जरूर मार डालना चाहिए। मगर हम सब लोग राजभक्त, ईमानदार नागरिक हैं, हम आपसे प्रार्थना करते हैं कि आप अपना नया कानून वापस ले लें।"

"आजादी? और तुम लोगों को? अगर तुम आजादी चाहते हो तो मेरी प्रजा नहीं रह सकते। अगर तुम मेरी प्रजा रहना चाहते हो तो मेरे कानूनों को मानना पड़ेगा। और मेरे कानून लोहे जैसे सख्त हैं। उन्हें मैं वापस ले लूं? कभी नहीं!"—इतना कहने के साथ ही राजा पलटा और अपने महल में चला गया।

नागरिकों को इससे आगे कहने की हिम्मत नहीं हुई। डरते-डरते उन्होंने धीरे से सर उठाया और देखा कि राजा जा चुका है। अब वे वापस घर लौटने के सिवा कुछ नहीं कर सकते थे। इसके बाद से लोगों ने एक नया तरीका अपना लिया—जब राजा बाहर आता था, तब वे बन्द दरवाजों के पीछे अपने घरों में ही कैद रहते थे, सड़कों पर झांकते तक नहीं थे।

एक दिन राजा अपने मंत्रियों और अंगरक्षकों के साथ महल से बाहर अपनी आरामगाह के लिए चला। सारी सड़कें सूनी पड़ी थीं और दोनों तरफ घरों के दरवाजे बन्द थे। जो अकेली आवाज उन्हें सुनायी दे रही थी वह उनके अपने पैरों की पदचाप थी, जैसे रात के सन्नाटे में कोई सेना मार्च कर रही हो।

तभी अचानक राजा थम गया और कान खड़े करते हुए अपने मंत्रियों पर गरजा, "सुन रहे हो ये आवाज?" मंत्रियों ने भी सुनने के लिए कान लगा दिये।

"हां, एक बच्चा रो रहा है", एक बोला।

"एक औरत गा रही है" दूसरे ने बताया।

"वह आदमी जरूर नशे में धुत्त होगा, बदमाश कहीं का, खिलखिलाकर हंस रहा है," तीसरे मंत्री ने कहा।

अपने मंत्रियों को सारा मामला इतना हल्का बनाते देखकर राजा आगबबूला हो गया। "क्या तुम लोग मेरा नया कानून भूल गये हो?"—वह पूरी ताकत से चिग्घाड़ा। गुस्से के मारे उसकी आंखें बाहर निकली पड़ रही थीं और उसका थुलथुल सीना धौंकनी की तरह चल रहा था।

मंत्रियों ने तुरन्त सिपाहियों को हुक्म दिया कि घरों में घुस जायें और जिस किसी ने भी कोई भी आवाज निकाली हो—चाहे वह बूढ़ा, जवान, मर्द, औरत कोई भी हो—उसे पकड़ लायें और जल्लाद के हवाले कर दें।

लेकिन तभी ऐसी घटना घटी जिसकी राजा ने सपने में भी आशा नहीं की थी। जब सिपाहियों ने घरों के दरवाजे तोड़े तो औरतों, पुरुषों और बच्चों का हुजूम बाहर उमड़ पड़ा। वे राजा की ओर झपटे और हाथों को बाज के पंजों की तरह ताने हुए उसके शरीर पर टूट पड़े। वे चिल्ला रहे थे, "नोच डालो! इसकी खूनी पोशाक को नोच डालो!"

आदमियों ने राजा की बांहें पकड़कर मरोड़ दी। औरतें उसकी छाती और पीठ पर मुक्के बरसा रही थीं। दो छोटे बच्चे उसकी बांहों के नीचे और पेट में गुदगुदी मचा रहे थे। चारों तरफ से घिर चुके राजा को भागने का कोई रास्ता नहीं सूझ रहा था। उसने अपना सिर घुटनों में छिपा लिया और गिलहरी की तरह गुड़ीमुड़ी हो गया, लेकिन सब बेकार। उसकी बगलों में मच रही भयानक गुदगुदी और उसके पूरे बदन में हो रही जलन उसकी बर्दाश्त के बाहर हो रहे थे। वह किसी भी तरह इस मुसीबत से छुटकारा नहीं पा सकता था। उसने अपना सिर कंधों में दुबका लिया और उसके मुंह से क्रोध, भय और हैरानी की मिली-जुली ध्वनियां निकलने लगी। उसके भृकुटी तानने और उन्हें डराने-धमकाने के प्रयासों को देखकर लोगों का हंसी के मारे बुरा हाल हो गया।

लोगों के घरों से निकलते हुए सिपाहियों ने देखा कि राजा कितना मजाकिया लग रहा था—जैसे क्रुद्ध बर्रों से घिरा बंदर—तो वे भूल गये कि उन्हें उसके प्रति सम्मान दिखाना चाहिए और वे भी सबके साथ हंसी में शामिल हो गये। इसे देखकर पहले तो मंत्रीगण डर गये, लेकिन फिर उन्होंने कनखी से राजा की ओर देखा और वे सब भी ठहाका मारकर हंस पड़े।

हंसते-हंसते दोहरे हुए जाते मंत्रियों के दिमाग में अचानक यह बात आयी कि वे राजा का कानून तोड़ रहे हैं और उसे गिरफ्तार किया जा सकता है। इसके पहले जब जनता राजा की खिल्ली उड़ाती थी तो मंत्री ही उसे दण्ड दिया करते थे और अब वे खुद उस पर हंस रहे थे। तभी उन्होंने उसकी तरफ फिर ध्यान से देखा। उसके पूरे शरीर पर काले-नीले चकत्ते पड़े हुए थे और वह गठरी बना हुआ ऐसा लग रहा था जैसे बरसात में भीगा हुआ मुर्गी का बच्चा। उसे देखते ही हंसी टूट रही थी।

"क्या यह स्वाभाविक नहीं है कि लोग मजाकिया चीजों पर हंसे? लेकिन राजा ने तो कानून बनाकर लोगों के हंसने पर पाबन्दी लगा दी थी। क्या बेहूदा कानून है!" और मंत्री भी लोगों के साथ मिलकर चिल्लाने लगे "नोच डालो! इसके झूठे कपड़े को नोच डालो!"

जब राजा ने देखा कि उसके मंत्री और सिपाही भी जनता से मिल गये हैं और अब वे उससे जरा भी खौफ नहीं खा रहे हैं तब उसे ऐसा धक्का लगा जैसे किसी ने उसके सिर पर भारी हथौड़ा दे मारा हो, और वह चारों खाने चित, धरती पर जा गिरा।

अनुवाद : **सत्यम**

विकास की योजनाएं या विनाश की?

(पेज 3 से आगे)

राज्य के 104 राजकीय उद्यानों को निजी क्षेत्र में सौंपने का फरमान तो सरकार ने पहले ही जारी कर दिया था, अब उच्च न्यायालय द्वारा इस पर मुहर लगा देने के बाद पूंजीपतियों की बांछें खिल गयी हैं। उधर ऊधमसिंह नगर में 264 एकड़ भूमि में बासमती चावल की कांट्रेक्ट फार्मिंग (अनुबंध पर खेती) शुरू हो चुकी है।

दो साल में दो लाख लोगों को रोजगार देने के चुनावी वायदे के साथ सत्तारूढ़ हुई कांग्रेस सरकार ने सबसे पहले राजस्व घाटे को कम करने के नाम पर सरकारी नौकरियों में कटौती तथा ठेके अथवा अनुबंध पर भी भर्ती के लिए सरकारी इजाजत लेने का फरमान जारी किया। ढेरों पद मृत संवर्ग घोषित हुए। पंतनगर विश्वविद्यालय में पूर्णतः ठेका प्रथा लागू कर दिया गया। एच.एम.टी. कारखाने से वी.आर.एस. के तहत सैकड़ों मजदूर निकाल दिये गये। अस्पताल तक में अनुबंधित डाक्टर व स्टाफ रखे जा रहे हैं।

रोजगार के नाम पर सरकार स्वरोजगार का झुनझुना जरूर थमा रही है। अभी उसने वीर चन्द्र सिंह गढ़वाली पर्यटन स्वरोजगार योजना के तहत 300 परियोजनाएं शुरू की हैं। अतीत की ऐसी तमाम योजनाएं इस बात का गवाह हैं कि ज्यादातर मामलों में कम पूंजी और बाजार की मार के कारण ज्यादातर लाभार्थी तबाही के कगार पर ही पहुंच जाते हैं। वैसे भी नौकरी की कटौती और निजीकरण-तालाबंदी-ठेकाकरण के इस दौर में लाखों बेरोजगारों के लिए महज यह लालीपाप ही है। वैसे भी देखें तो केन्द्र सरकार लगातार नौकरियां छीन रही है और देश के प्रधानमंत्री भी स्वरोजगार पर जोर दे रहे हैं। भाजपा हो या कांग्रेस अथवा दूसरी पूंजीवादी पार्टियां, नीतियों के मामले में तो सब एक ही हैं। **(अगले अंक में जारी)**

पंजीयन संख्या - 71980/99, डाक पंजीयन संख्या - LW-NP/349/2003

दुनिया भर में लड़ रहे हैं मजदूर

दक्षिण कोरिया : मजदूरों की खुदकुशी के बाद आंदोलन और उग्र हुआ

दक्षिण कोरिया में दमनकारी श्रम कानूनों के खिलाफ नवम्बर में 40,000 मजदूरों ने राजधानी सोल की सड़कों पर उग्र प्रदर्शन किया। जब पुलिस ने उन पर हमला किया तो उन्होंने लोहे की छड़ों, डण्डों और सोडावाटर की बोतलों से जमकर जवाब दिया।

ये मजदूर अपने तीन साथियों के बलिदान के बाद और भी आक्रोश में थे। मालिकों के शोषण और भयंकर दमनकारी रवैये के खिलाफ हताशाभरे विरोध के तौर पर इन तीन मजदूरों ने अलग-अलग घटनाओं में अपनी जान दे दी थी।

जान देने वालों में पहले थे हान जिन हेवी इंडस्ट्रीज यूनियन के भूतपूर्व अध्यक्ष किम जू-इक। 17 अक्टूबर को पुसान शहर में फैक्टरी परिसर में डेढ़ सौ फुट ऊंची क्रेन के ऊपर उसे मरा पाया गया। क्रेन के ऊपर ही वह 11 जून से धरना दे रहा था और 129वें दिन उसने फांसी लगा ली। उसकी जेब में दो चिट्ठियां मिलीं। एक मजदूरों के नाम थी और दूसरी उसके परिवार के नाम। पहली चिट्ठी में किम ने कम्पनी के मैनेजमेण्ट की तीखी आलोचना करते हुए लिखा था कि एक ओर मजदूरों और ट्रेड यूनियन को दबाया जाता है और दूसरी ओर अफसरों और शेयरहोल्डरों की जमकर खातिरदारी की जाती है। कम्पनी रिकार्ड मुनाफा कमा रही है फिर भी मजदूरों से कहा जा रहा है कि वे अपना वेतन न बढ़ाने के लिए राजी हो जायें। उसने अपनी चिट्ठी में मजदूरों के उत्पीड़न, यूनियन के साथ वार्ताओं में धोखाधड़ी, छंटनी, यूनियन कार्यकर्ताओं को मनमाने ढंग से इधर-उधर करने और बेहद कम मजदूरी का जिक्र किया था।

किम और कोरिया के दूसरे मजदूरों को सबसे अधिक जिस चीज ने उत्तेजित किया था वह था एक नया कानून जिससे कम्पनियां मजदूरों को तबाह कर रही हैं। 39 वर्षीय किम तीन बच्चों का पिता था। उसने अपने परिवार को लिखे अपने खत में कहा था कि जब तक मजदूरों का संघर्ष कामयाब न हो जाये तब तक उसके शरीर को क्रेन के ऊपर से हटाया न जाये। उसके साथी मजदूर उसकी अन्तिम इच्छा के सम्मान में क्रेन के चारों ओर घेरा डालकर बैठे हैं। (यह रिपोर्ट लिखे जाने तक मजदूरों के संघर्ष की कामयाबी के बारे में हमें जानकारी नहीं मिल पायी। —संपादक)

इसके बाद 25 अक्टूबर को ताइगू में और 26 अक्टूबर को क्वांगजू में दो और मजदूरों ने मैनेजमेण्ट के उत्पीड़न के खिलाफ अपनी जान देकर मजदूरों का आह्वान किया। उनकी पुकार देशभर के लाखों मजदूरों ने सुनी और सड़कों पर उतर पड़े।

घोर दमनकारी नया कानून

नये कानून के तहत किसी कम्पनी को अगर हड़ताल के कारण नुकसान होता है तो वह ''क्षतिपूर्ति'' के लिए यूनियनों तथा अलग-अलग सदस्यों पर मुकदमा कर सकती है। दक्षिण कोरिया के अर्थव्यवस्था पर काबिज बड़ी कम्पनियां इन कानूनों का इस्तेमाल करके कई यूनियनों और उनके कार्यकर्ताओं को दिवालिया बना चुकी हैं। किम जू-इक की कम्पनी के मैनेजमेण्ट ने न केवल उसकी यूनियन से भारी जुर्माना वसूला था बल्कि उसकी कई महीने की तनख्वाह और उसका मकान भी जब्त कर लिया था।

दक्षिण कोरिया के मजदूर आज बेहद मुश्किलों का सामना कर रहे हैं। आधे से अधिक मजदूर टेम्परेरी, पार्ट टाइम या फिर तीन-तीन महीने के ठेके पर काम करते हैं। उन्हें न्यूनतम सुविधाएं भी नहीं मिलतीं। देश के 40 प्रतिशत पढ़े-लिखे नौजवान बेरोजगार हैं। हालत यह है कि एक नौकरी के लिए औसतन 385 लोग आवेदन करते हैं।

कोरिया के मजदूर इन हालात और दमनकारी कानूनों के खिलाफ लगातार लड़ रहे हैं। छात्रों, नौजवानों की भारी आबादी भी इन संघर्षों में मजदूरों के कंधे से कंधा मिलाकर हिस्सा लेती है।

कोरिया की धरती पर 40,000 अमेरिकी सैनिक स्थायी तौर पर जमे हुए हैं और वह अमेरिकी शिकंजे में है। कोरियाई अर्थव्यवस्था के दुनियाभर में गुण गाये जाते हैं। एल.जी., सैमसंग तथा हुंदई जैसी कोरिया की बहुराष्ट्रीय कम्पनियां कई मुल्कों में मुनाफा बटोरती रहती हैं लेकिन उनकी समृद्धि का राज कोरियाई मजदूरों के भयंकर शोषण में है। कोरिया के मजदूरों ने इस हालत के खिलाफ पूरी दुनिया का ध्यान खींचने और इसे बदलने के लिए लड़ाई छेड़ दी है।

आस्ट्रिया के रेल मजदूरों की जबर्दस्त हड़ताल : आने वाले दिनों का संकेत

भूमण्डलीकरण के दौर में अमीर देशों के पूंजीपतियों ने सिर्फ गरीब मुल्कों के मजदूरों की ही लूट तेज नहीं कर दी है, खुद अपने देशों के मजदूरों का भी शोषण और दमन तेज कर दिया है। मजदूर वर्ग भी चुपचाप इसे बर्दाश्त नहीं कर रहा है। इंगलैण्ड से लेकर स्पेन, इटली, पोलैण्ड, बेल्जियम आदि देशों में लगातार हड़तालों और विशाल प्रदर्शनों का सिलसिला इसका सबूत है।

पिछले नवम्बर में आस्ट्रिया के रेल मजदूरों ने निजीकरण के खिलाफ जबर्दस्त हड़ताल की। सरकार की योजना थी कि आस्ट्रिया रेलवे को तोड़कर दस अलग-अलग कम्पनियों में बांट दिया जाये। इससे मजदूरों की छंटनी आसान हो जायेगी और अत्यन्त संगठित रेल मजदूरों की ताकत को भी कमजोर किया जा सकेगा। हालांकि आस्ट्रिया में अदालत सहित कई महत्वपूर्ण लोगों ने चेतावनी दी कि रेलवे के निजीकरण और बंटवारे के बहुत बुरे परिणाम होंगे। लेकिन सरकार तो किसी भी तरह आस्ट्रिया के संगठित मजदूर आंदोलन को कुचलने पर आमादा थी।

आस्ट्रियाई रेल मजदूरों की यूनियन जी.डी.ई. ने सरकार पर दबाव डालने के लिए 4 नवम्बर को 12 घण्टे की चेतावनी हड़ताल आयोजित की जो शत-प्रतिशत सफल रही। रात 12 बजे से अगले दिन 12 बजे तक पूरे देश में एक भी ट्रेन अपनी जगह से नहीं खिसकी। लेकिन सरकार अड़ी रही और 11 नवम्बर को तथाकथित रेलवे सुधार का कानून पारित कर दिया गया। अगले ही दिन जी.डी.ई. ने अनियतकालीन हड़ताल का आह्वान किया। हड़ताल के पहले दिन तो डाक सेवा के मजदूरों ने भी इसमें हिस्सा लिया। देश भर में 7500 रेलगाड़ियां और 2300 से अधिक बसें नहीं चलीं।

जी.डी.ई. का नेतृत्व पूरी तरह ट्रेड यूनियन नौकरशाहों के हाथ में है और उसका कामकाज घोर अलोकतांत्रिक ढंग से तथा अफसरी अंदाज में चलता है। निर्णयों में आम मजदूरों की कोई भागीदारी नहीं होती। नेतृत्व से नाराजगी के बावजूद मजदूर लड़ने के लिए तैयार थे लेकिन 14 नवम्बर को जी.डी.ई. ने अचानक हड़ताल वापस ले ली। हड़ताल इतनी सफल थी कि अगर यह दो दिन भी और चलती तो आस्ट्रिया के स्टील के कारखाने बंद हो जाते और कागज तथा तेल उद्योग ठप्प पड़ जाता। आस्ट्रिया की सीमाओं पर 300 रेलगाड़ियां रुकी पड़ी थीं जो पड़ोसी देशों से माल ढोकर ला रही थीं। इटली और जर्मनी की रेल कम्पनियां भी आस्ट्रियाई सरकार पर हड़ताल खत्म कराने के लिए दबाव डाल रही थीं। सरकार ने यूनियन के समझौते के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। रेलवे का बंटवारा हो गया। मजदूरों को केवल इतनी सफलता मिली कि फिलहाल समझौते में यूनियनों की सामूहिक भागीदारी बनी रहेगी और मजदूरों के अनुबंधों पर हाथ नहीं डाला जायेगा।

हड़ताल के सबक

मजदूर हड़ताल की कार्रवाई और सरकार के दमन से न तो डरे थे और न ही थके थे। इसके विपरीत वे आंदोलन को और व्यापक बनाने की ठोस कोशिशों में जुटे थे। देश भर में प्रिण्टिंग प्रेसों के मजदूरों की यूनियनों और पत्रकारों की यूनियन की एक राष्ट्रीय बैठक होने वाली थी जिसमें हड़ताल को समर्थन दिया जाना था। नगर परिषदों, तेल उद्योग, धातु उद्योग और कुछ अन्य क्षेत्रों में भी रेल हड़ताल के समर्थन में हड़तालें होनी थीं। ट्रेड यूनियनों का राष्ट्रव्यापी प्रदर्शन 22 नवम्बर को होने वाला था। यह लड़ाई जीती जा सकती थी। लेकिन इससे पहले ही गद्दार नेतृत्व ने हड़ताल वापस ले ली।

हड़ताल वापस लेने से नाराज मजदूरों ने इस हार से महत्वपूर्ण सबक निकाले हैं। वे समझने लगे हैं कि हड़ताल के जरिए केवल आर्थिक दबाव डालने से काम नहीं चलता। हड़ताल के दौरान वे अपने कमरों और घरों में बैठकर इंतजार कर रहे थे कि सरकार झुकेगी जबकि पूरा बुर्जुआ मीडिया झूठों और धमकियों से उन पर हमला करता रहा। मजदूरों ने इस कड़वे अनुभव से समझा है कि उन्हें सड़कों पर उतरकर दूसरे मजदूरों और देश की बाकी आबादी को यह समझाना होगा कि उनकी हड़ताल के कारण और लक्ष्य क्या हैं। उन्हें ट्रेड यूनियनों के भीतर लोकतंत्र लाने की भी लड़ाई लड़नी होगी।

बोस्निया-हर्जेगोविना में मजदूरों का संघर्ष

यूरोप के सबसे गरीब मुल्कों में शामिल यह छोटा सा देश बोस्निया-हर्जेगोविना पहले युगोस्लाविया का हिस्सा था। वहां नकली समाजवाद के ढहने के साथ ही साम्राज्यवादी साजिशें कामयाब हुईं और युगोस्लाविया न केवल टुकड़े-टुकड़े हो गया बल्कि वर्षों तक वहां खूनी गृहयुद्ध जारी रहा जिसमें हजारों लोग मारे गये। गृहयुद्ध से तबाह देश में आज मालिक तो मुनाफा पीट रहे हैं लेकिन मजदूर बेहद खराब हालात में जीने को मजबूर हैं। टीटो के समय से ही वहां कायम नकली समाजवाद के दौरान मजदूरों को संगठित होने का भी हक नहीं था। पर अब मजदूर अपने हकों के लिए एकजुट लड़ाई लड़ रहे हैं।

पिछले कुछ महीनों के दौरान सीमा के दोनों तरफ कई सौ हड़तालें, रैलियां और विरोध प्रदर्शन हुए हैं। इनमें सबसे महत्वपूर्ण थी बान्या लूका के चिकित्साकर्मियों की हड़ताल जो 3 महीने से ज्यादा चली। जेनिका के 4000 धातु मजदूरों ने भी लम्बी लड़ाई लड़ी। राजधानी सरायेवो में मजदूरों ने जुझारू संघर्ष किया और कई सरकारी इमारतों पर कब्जा कर लिया। कई दूसरे शहरों के कर्मचारियों ने भी उनका साथ दिया। तुजला शहर के रासायनिक उद्योगों के मजदूर भी लगातार संघर्ष कर रहे हैं। उनकी कई बार पुलिस से उग्र झड़पें हो चुकी हैं।

मजदूर अपने अनुभवों से सीखते हुए अपने जीवन के हालात बेहतर बनाने के लिए संगठित लड़ाई लड़ने की तैयारी कर रहे हैं।

प्रस्तुति : **सत्यम**

"नेताओं का बोलबाला जनता का पिट रहा दिवाला"

दिशा छात्र संगठन और नौजवान भारत सभा की झांकी

गोरखपुर। दिशा छात्र संगठन और नौजवान भारत सभा की ओर से 'नेताओं का बोलबाला, जनता का पिट रहा दिवाला'' शीर्षक से एक रोचक एवं अनूठी किस्म की झांकी शहर में निकाली गयी। अलीनगर से शुरू होकर विजय चौक, गोलघर चौराहा चेतना तिराहा होते हुए टाउनहाल पर पहुंचकर समाप्त हुई यह झांकी 'क्रान्तिकारी लोक स्वराज्य अभियान' के अन्तर्गत निकाली गयी थी।

पूंजीवादी चुनावी पार्टियों के नेताओं की दलबदलू प्रकृति और उनके अवसरवादी चरित्र को उजागर करता एक पात्र रंग-बिरंगा किस्म का विशेष परिधान पहने हुए था जिस पर लिखा था 'मंहगाई से त्रस्त, जनता है पस्त और नेता है मस्त', 'नेताओं की अब यही है सीख, पढ़-लिखकर मांगो भीख,' 'हवाला, तहलका और फिर ताबूत घोटाला—जिन्दगी तो क्या, इन्होंने तो मौत को भी बेच डाला' आदि। अभियान के कार्यकर्ता कुछ व्यंग्यगीत भी गाते चल रहे थे : 'रउरा ससना के बाटे ना जवाब भाई जी, रउरा कुरसी से झरे ला गुलाब भाई जी' और 'सौ-सौ वादे करके हमसे लिये जिन्होंने वोट, देश बचाओ कहकर हमको देते हैं ये चोट'। जब झांकी रुक जाती और गीतों की प्रस्तुति नाटकीयता के साथ होती थी तो अगल-बगल काफी भीड़ लग जा रही थी और आम लोग उत्सुकता और कौतूहल से झांकी को देखने लगते थे। कई जगहों पर भीड़ भी झांकी के साथ हो लेती थी क्योंकि इसमें नेताओं और वर्तमान व्यवस्था की जालिम नीतियों का भण्डाफोड़ किया जा रहा था—जैसे आम लोगों की दबी हुई अभिव्यक्तियों को एक मंच जैसा मिल गया हो।

झांकी के साथ एक पर्चा भी बांटा जा रहा था, जिसमें सवाल-जवाब की शैली में पूंजीवादी राजनीति का भंडाफोड़ किया गया था (जैसे—'चुनावी नेता क्या करते हैं?—पूंजीपतियों की चाकरी, साम्राज्यवादियों से वफादारी और जनता से गद्दारी, 'भारतीय जनतंत्र में क्या होता है?—पूंजीपतियों की तानाशाही! इसमें होता है नेताओं का बोलबाला और जनता का पिटता है दिवाला।')

झांकी को रोककर जगह-जगह नुक्कड़ सभाएं भी की जा रही थीं। सभा में वक्ताओं ने कहा कि आजाद देश के पिछले 56 वर्षों के इतिहास में यह बात साबित हो चुकी है कि संसद-विधानसभाओं में नकली बहसें होती हैं, जनता को कुचलने के कानून बनते हैं और सभी नेता पूंजीपतियों की चाकरी करके आम जनता की पीठ में छुरा भोंक रहे हैं। अब एक ही रास्ता बचा है और वह है लोक स्वराज्य के लिए संघर्ष का रास्ता, शासन-मशीनरी को अपने हाथों में लेने का रास्ता। लोक स्वराज्य पंचायतों का गठन करके इसकी शुरुआत की जा सकती है ताकि उत्पादन, राजकाज, और शासन की बागडोर आम मेहनतकश जनता के हाथों में आ सके।

दोनों संगठनों के कार्यकर्ता झांकी में नारे लगाते चल रहे थे : 'ज्यों-ज्यों नेता आबाद हुए, त्यों-त्यों हम बरबाद हुए, 'पूंजीपतियों से यारी है, जनता से गद्दारी है। सांपनाथ चले गये, अब नागनाथ की बारी है। 'बनते हैं जनसेवक, चलाते हैं सरकार। जालसाज, 420, धूर्त और मक्कार!' आदि।

परम्परागत झांकियों से अलग इस झांकी की विशेषता यह थी कि वर्तमान व्यवस्था, नेताओं के दोहरे आचरण और आम जनता के असंतोष को बड़े बेबाक ढंग से प्रस्तुत किया गया था। बड़ी संख्या में लोगों ने इसे देखा, सराहा और इसमें हिस्सेदारी भी की। – **बिगुल संवाददाता**

मुद्रक, प्रकाशक और स्वामी डा. दूधनाथ द्वारा 69, बाबा का पुरवा, निशातगंज, लखनऊ से प्रकाशित एवं उन्हीं के द्वारा वानी ग्राफिक्स, अलीगंज, लखनऊ से मुद्रित। कम्पोजिंगः कम्प्यूटर प्रभाग, राहुल फाउण्डेशन, लखनऊ।
सम्पादकः **डा. दूधनाथ, मुकुल** • सम्पादकीय पताः **69, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006** • सम्पादकीय उपकार्यालयः जनगण होम्यो सेवासदन, मर्यादपुर, मऊ